TEXT PROBLEM WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY
OU_182475
UNIVERSAL LIBRARY

OUP—556—13-7-71—4,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83 Accession No. H2039

Author B97S धर्मवीर भारती

Title सूरज का सातवाँ घोड़ा

This book should be returned on or before the date last marked below.

आगे बढ़ो,
सूर्योदय रुका हुआ है !
सूरज को मुक्त करो ताकि संसार में प्रकाश हो,
देखो उसके रथ का चक्र कीचड़ में फंस गया है
आगे बढ़ो साथियो,
सूरज के लिये यह सम्भव नहीं कि वह अकेले उदित हो सके
घुटने जमा कर, सीना अड़ा कर
उसके रथ को कीचड़ से उबारो
देखो, हम सब उसको सहारा दे रहे हैं
क्योंकि हम सब
सूरज के अंश हैं !

—एंजेलो सिकेलियानो

सूरज का सातवाँ घोड़ा

(एक नये ढंग का लघु-उपन्यास)

धर्मवीर भारती

साहित्य भवन लिमिटेड

इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : फरवरी, १९५२.

मूल्य १॥)

राजनारायण अवस्थी द्वारा
हिन्दी साहित्य प्रेस में मुद्रित

त्रिलोकी-द्वय,
कार्तिक तथा गोपेश के
अमित स्नेह से

निवेदन

'गुनाहों का देवता' के बाद यह मेरी दूसरी कथा-कृति है। दोनों कृतियों में काल-क्रम का अन्तर पड़ने के अलावा उन विन्दुओं में भी अन्तर आगया है जिन पर खड़े होकर मैंने समस्या का विश्लेषण किया है।

कथा-शैली भी कुछ अनोखे ढंग कि है जो है तो वास्तव में पुरानी ही, पर इतनी पुरानी कि आज के पाठक को थोड़ी नयी या अपरिचित सी लग सकती है। बहुत छोटे से चौखटे में काफ़ी लम्बा घटना-क्रम और काफी विस्तृत क्षेत्र का चित्रण करने की विवशता के कारण यह ढंग अपनाना पड़ा है।

मेरा दृष्टिकोण इन कथाओं में स्पष्ट है; किन्तु इनमें आये हुए मार्क्स-वाद के ज़िक्र के कारण थोड़ा सा विवाद किसी क्षेत्र से उठाया जा सकता है। जो लोग कि सत्य की ओर से आँख मूँदकर अपने पक्ष को ग़लत या सही ढङ्ग से प्रचरित करने को समालोचना समझते हैं, उनसे मुझे कुछ नहीं कहना है, क्योंकि साहित्य की प्रगति में उनका कोई रचनात्मक महत्व मैं मानता ही नहीं; हाँ, जिनमें थोड़ी सी समझदारी, सहानुभूति और परिहास-प्रवृत्ति है उनसे मुझे एक स्पष्ट बात कहनी है।

पिछले तीन चार वर्षों में मार्क्सवाद के अध्ययन से मुझे जितनी शान्ति, जितना बल और जितनी आशा मिली है, हिन्दी की मार्क्सवादी समीक्षा और चिन्तना से उतनी ही निराशा और असन्तोष। अपने समाज, अपनी जन-संस्कृति और उसकी परम्पराओं से वे नितान्त अनभिज्ञ रहे हैं। अतः उनके निष्कर्ष ऐसे ही रहे हैं कि उन पर या तो रोया जा सकता है या दिल खोल कर हंसा जा सकता है। फिर उनकी कमियों की ओर इशारा करने पर वे जिस तरह खीज ऊठते हैं, वह और भी हास्यास्पद और दयनीय है।

इसकेबावजूद मेरी आस्था कभी भी मार्क्सवाद में कम नहीं हुई है और न मैंने अपनी जनता के दुख दर्द से मुँह फेरा है। धीरे धीरे अपने दृष्टिकोण में अधिकाधिक सामाजिकता विकसित करने की ओर मैं ईमानदारी से उन्मुख रहा हूँ और रहूँगा। और उसी दृष्टि से जहाँ मुझे मार्क्सवादी शब्दजाल के पीछे भी असन्तुष्ट अहमूवाद और गुट-बन्दी दीख पड़ी है उसकी ओर साहस से स्पष्ट निर्देश करना मैं अनिवार्य समझता हूँ क्योंकि ये तत्त्व हमारे जीवन और हमारी संस्कृति की स्वस्थ प्रगति में ख़तरे पैदा करते हैं। मैं जानता हूँ कि जो मार्क्सवादी अपने व्यक्तित्व में सामाजिकता तथा मार्क्सवाद की पहली शर्त-आब्जेक्टिविटी विकसित कर चुके हैं, वे मेरी बात समझेंगे और इतना मेरे सन्तोष के लिये यथेष्ट है।

इसकी भूमिका श्री अज्ञेय ने लिखनी स्वीकार कर ली इसके लिये मैं उनका कितना आभारी हूँ यह शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। वे मेरे अन्तर की आस्था और ईमानदारी को पहचानते हैं और आज के युग में किसी भी लेखक को इससे अधिक क्या चाहिये। उन्होंने इसकी शैली तथा विषय-वस्तु के मर्म को जैसे प्रस्तुत किया है, वह केवल उन्हींके लिये सम्भव था। मेरे प्रति उन्होंने जो कुछ अनुशंसात्मक वाक्य लिखे हैं, पता नहीं मैं उनके योग्य हूँ या नहीं, पर मैं उन्हें स्नेह-आशीर्वादों के रूप में सिर झुका कर ग्रहण करता हूँ और चाहता हूँ कि अपने को उनके योग्य सिद्ध कर सकूँ।

अपने पाठकों से मुझे अक्सर बड़े अनोखे और बड़े स्नेहपूर्ण पत्र मिलते रहे हैं। मेरे लिये वे मूल्यवान निधियाँ हैं। उनसे मैं एक बात कहना चाहता हूँ—मैं लिख लिख कर सीखता चल रहा हूँ और सीख सीख कर लिखता चल रहा हूँ। जो कुछ लिखता हूँ उसमें सामाजिक उद्देश्य अवश्य है पर वह स्वान्तःसुखाय भी है। यह अवश्य है कि मेरे 'स्व' में आप सभी सम्मिलित हैं, आप सबों का सुख-दुख, वेदना-उल्लास

मेरा अपना है : वास्तव में वह कोई बहुत बड़ी कहानी है जो हम सबों के माध्यम से व्यक्त हो रही है। केवल उसीका एक अंश मेरी क़लम से उतर आया है। इसीलिये इस कृति में जो कुछ श्रेयस्कर है वह आप सबों का ही है; जो कुछ कमज़ोरियाँ हैं वह मेरी अपनी समझी जाँय।

धर्मवीर भारती

शिवरात्रि,
२३ फरवरी १९५२.

भूमिका

लेखक को दो चीज़ों से बचना चाहिए : एक तो भूमिकाएँ लिखने से, दूसरे अपने समवर्ती लेखकों के बारे में अपना मत प्रकट करने से। यहाँ मैं ये दोनों भूलें करने जा रहा हूँ, पर इसमें मुझे जरा भी झिझक नहीं है खेद की तो बात ही क्या। मैं मानता हूँ कि धर्मवीर भारती हिन्दी की उन उठती हुई प्रतिभाओं में से हैं जिन पर हिन्दी का भविष्य निर्भर करता है और जिन्हें देखकर हम कह सकते हैं कि हिन्दी उस अँधियारे अन्तराल को पार कर चुकी है जो इतने दिनों से मानों अन्तहीन दीख पड़ता था।

प्रतिभाएँ और भी हैं, कृतित्व औरों का भी उल्लेख्य है। पर उनसे धर्मवीरजी में एक विशेषता है। वह केवल अच्छे, परिश्रमी

रोचक लेखक नहीं हैं; वह नयी पौध के सब से मौलिक लेखक हैं। मेरे निकट यह बहुत बड़ी विशेषता है, और इसीकी दाद देने के लिए मैंने यहाँ वे दोनों भूलें करना स्वीकार किया है जिनमें से एक से तो मैं सदा बचता आया हूँ; हाँ, दूसरी से बचने की कोशिश नहीं की क्योंकि अपने बहुत से समकालीनों के अभ्यास प्रतिकूल मैं अपने समकालीनों की रचनाएँ पढ़ता हूँ, और पढ़ता हूँ तो उनके बारे में कुछ मत प्रकट करना बुद्धिमानी न हो तो अस्वाभाविक तो नहीं है !

भारती जीनियस नहीं हैं : किसी को जीनियस कह देना उसकी प्रतिभा को एक बहुत भारी विशेषण देकर उड़ा देना ही है। जीनियस क्या है, यह हम जानते नहीं। लक्षणों को ही जानते हैं : अथक श्रमसामर्थ्य और अध्यवसाय, बहुमुखी क्रियाशीलता, प्राचुर्य, चिर-जाग्रत चिर-निर्माणशील कल्पना, सतत जिज्ञासा और पर्यवेक्षण, देश-काल या युग-सत्य के प्रति सतर्कता, परम्परा-ज्ञान, मौलिकता, आत्मविश्वास और—हाँ,—एक गहरा विनय। भारती में ये सभी विद्यमान हैं ; अनुपात इनका जीनियसों में भी समान नहीं होता। और भारती में एक चीज़ और भी है जो प्रतिभा के साथ ज़रूरी तौर पर नहीं जाती—हास्य।

ये सब बातें जो मैं कह रहा हूँ, इन्हें वही पाठक समझेगा जिसने भारती की अन्य रचनायें भी पढ़ी हैं, जैसी कि मैंने पढ़ी है।

जिसने वे नहीं पढ़ीं. वह सोच सकता है कि इस तरह की साधारण बातें कहने से क्या लाभ जिनकी कसौटी प्रस्तुत सामग्री से न हो सके ? और उसका सोचना ठीक होगा : स्थाली-पुलाक न्याय कहीं लगता है तो मौलिक प्रतिभा की परख में , उसकी छाप छोटी सी अलग कृति पर भी स्पष्ट होती है; और 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' पर भी धर्मवीर की विशिष्ट प्रतिभा की छाप है ।

सब से पहली बात है उसकी गठन । बहुत सीधी, बहुत सादी, पुराने ढंग की--बहुत पुराने, जैसा आप बचपन से जानते है—अलफ़-लैला वाला ढंग, पंचतन्त्र वाला ढंग, बोकैच्छियो वाला ढंग, जिसमें रोज़ किस्सागोई की मजलिस जुटती है, फिर कहानी में से कहानी निकलती है। ऊपरी तौर पर देखिए तो यह ढंग उस ज़माने का है जब सब काम फ़ुरसत और इत्मीनान से होते थे, और कहानी भी आराम से और मजे लेकर कही जाती थी । पर क्या भारती को वैसी कहानी वैसे कहना अभीष्ट है ? नहीं; यह सीधापन और पुरानापन इसीलिए है कि आपको भारती की बात के प्रति एक खुलापन पैदा हो जाय; बात वह फ़ुरसत का वक्त काटने या दिल बहलाने वाली नहीं है, हृदय को कचोटने, बुद्धि को झंझोड़ कर रख देने वाली है । मौलिकता-अभूतपूर्व, पूर्णशृंखला-विहीन नयेपन में नहीं, पुराने में नयी जान डालने में भी है

(और कभी पुरानी जान को नयी काया देने में भी); और भारती ने इस ऊपर से पुराने जान पड़ने वाले ढंग का भी बिल्कुल नया और हिन्दी में अनूठा उपयोग किया है। और वह केवल प्रयोग-कौतुक के लिए नहीं, इसीलिए कि वह जो कहना चाहते हैं, उसके लिए यह उपयुक्त ढंग है।

'सूरज का सातवाँ घोड़ा' एक कहानी में अनेक कहानियाँ नहीं, अनेक कहानियों में एक कहानी है। वह एक पूरे समाज का चित्र और आलोचन है; और जैसे उस समाज की अन्त शक्तियाँ परस्पर-सम्बद्ध, परस्पर-आश्रित और परस्पर-सम्भूत हैं, वैसे ही उसकी कहानियाँ भी। प्राचीन चित्रों में जैसे एक ही फलक पर परात्पर कई घटनाओं का चित्रण करके उसकी वर्णनात्मकता को सम्पूर्ण बनाया जाता है, उसमें एक घटना-चित्र की स्थिरता के बदले एक घटना-क्रम की प्रवाहमयता लायी जाती है, उसी प्रकार इस समाज-चित्र में एक ही वस्तु को कई स्तरों पर, कई कोणों से और कई कालों में देखने और दर्शाने का प्रयत्न किया गया है, जिससे उस में देश और काल दोनों का प्रसार प्रतिबिम्बित हो सके। लम्बाई और चौड़ाई के दो आयामों के फलक में गहराई का तीसरा आयाम छाहीं द्वारा दिखाया जाता है; समाज-चित्र में देश के तीन आयामों के अतिरिक्त काल के भी आयाम आवश्यक होते हैं और उन्हें

दर्शाने के लिए चित्रकार को अन्य उपाय ढूंढना आवश्यक होता है।

वह चित्र सुन्दर या प्रीतकर या सुखद नहीं है; क्योंकि उस समाज का जीवन वैसा नहीं है और भारती ने चित्र को यथाशक्य सच्चा उतारना चाहा है। पर वह असुन्दर या अप्रीतिकर भी नहीं है, क्योंकि वह मृत नहीं है, न मृत्यु-पूजक ही है। उसमें दो चीजें हैं जो उसे इस ख़तरे से उबारती हैं— और इन में से एक भी काफी होती है : एक तो उसका हास्य, भले ही वह वक्र और कभी कुटिल या विद्रूप भी हो, दूसरे एक अदम्य और निष्ठामयी आशा। वास्तव में जीवन के प्रति यह अडिग आस्था ही सूरज का सातवाँ घोड़ा है, "जो हमारी पलकों में भविष्य के सपने और वर्त्तमान के नवीन आकलन भेजता है ताकि हम वह रास्ता बना सकें जिन पर होकर भविष्य का घोड़ा आयेगा।" इस वस्तु का इतना सुन्दर निर्वाह, उसके गम्भीरतर तात्पर्यों का इस साहसपूर्ण और ईमानदार ढंग से स्वीकार और उस स्वीकृति में भी उससे न हार कर उठने का निश्चय—ये सब 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' को एक महत्त्वपूर्ण कृति बनाते हैं।

"पर कोई न कोई चीज़ ऐसी है जिसने हमेशा अन्धेरे चीर कर आगे बढ़ने, समाज-व्यवस्था को बदलने और मानवता के

सहज मूल्यों को पुनः स्थापित करने की ताकत और प्रेरणा दी है। चाहे उसे आत्मा कह लो चाहे कुछ और। और विश्वास, साहस, सत्य के प्रति निष्ठा, उस प्रकाशवाही आत्मा को उसी तरह आगे ले चलते हैं जैसे सात घोड़े सूर्य को आगे बढ़ा ले चलते हैं।" ये पुस्तक के कथा-गायक और प्रमुख पात्र माणिक मुल्ला के शब्द हैं। किसी उक्ति के निमित्त से एक पात्र के साथ लेखक को सम्पूर्ण रूप से एकात्म करने की प्रचलित मूर्खता मैं नहीं करूँगा, पर इस उक्ति में बोलने वाला विश्वास स्वयं भारती का भी विश्वास है, ऐसा मुझे लगता है; और वह विश्वास हम सब में अटूट रहे, ऐसी मेरी कामना है।

बसन्त-पंचमी
२००८

'अज्ञेय'

माणिक-कथा-चक्र के
अन्तर्गत, निष्कर्षवादी कथाओं
के रूप में कहा गया
लघु-उपन्यास
'सूरज का सातवाँ घोड़ा'
जिसे
इस रूप में
प्रस्तुत किया
धर्मवीर भारती
ने !

उपोद्घात

इसके पहले कि मैं आपके सामने माणिक मुल्ला की अद्भुत निष्कर्ष-वादी प्रेम कहानियों के रूप में लिखा गया 'यह सूरज का सातवां घोड़ा' नामक उपन्यास प्रस्तुत करूँ, यह अच्छा होगा कि पहले आप यह जान लें कि माणिक मुल्ला कौन थे, वे हम लोगों को कहाँ मिले, कैसे उनकी प्रेम कहानियां हम लोगों के सामने आईं, प्रेम के विषय में उनकी धारणाएँ और अनुभव क्या थे, तथा कहानी के टेकनीक के बारे में उनकी मौलिक उद्भावनाएँ क्या थीं।

'थीं' का प्रयोग मैं इसलिये कर रहा हूँ कि मुझे यह नहीं मालूम कि आजकल वे कहां हैं, क्या कर रहे हैं, अब कभी उनसे मुलाकात होगी या नहीं; और अगर सचमुच वे लापता होगये तो कहीं उनके साथ उनकी ये अद्भुत कहानियां भी लापता न हो जांय इसीलिये मैं इन्हें आपके सामने पेश किये देता हूँ।

एक ज़माना था जब वे हमारे मुहल्ले के मशहूर व्यक्ति थे। वहीं पैदा हुए, बड़े हुए, वहीं शोहरत पाई और वहीं से लापता होगये। हमारा मुहल्ला काफ़ी बड़ा है, कई हिस्सों में बंटा हुआ है और वे उस हिस्से के निवासी थे जो सबसे ज़्यादा रंगीन, और रहस्यमय है और जिसकी नई और पुरानी पीढ़ी दोनों के बारे में अजब अजब सी किम्वदन्तियाँ मशहूर हैं।

मुल्ला उनका उपनाम नहीं, जाति थी। वे काश्मीरी थे। कई पुश्तों से उनका परिवार यहाँ बसा हुआ था, वे अपने भाई और भाभी के साथ रहते थे। भाई और भाभी का तबादला हो गया था और वे पूरे घर में अकेले रहते थे। इतनी सांस्कृतिक स्वाधीनता तथा इतना कम्यूनिज़्म एक साथ उनके घर में था कि यद्यपि हम लोग उनके घर से बहुत दूर रहते थे लेकिन वहीं सब का अड्डा जमा करता था। हम सब उन्हें गुरुवत मानते थे और उनका भी हम सबों पर निश्छल प्रगाढ़ स्नेह था। वे नौकरी करते हैं या पढ़ते हैं, नौकरी करते हैं तो कहाँ, पढ़ते हैं तो क्या पढ़ते हैं, यह भी हम लोग कभी नहीं जान पाए। उनके कमरे में किताबों का नाम-निशान भी नहीं था। हाँ कुछ अजब-अजब चीजें वहाँ थीं जो अमूमन् दूसरे लोगों के कमरों में नहीं पाई जातीं। मसलन दीवार पर एक पुराने काले फ्रेम में एक मोटो जड़ा टँगा था—'खाओ, बदन बनाओ,' एक ताख में एक काली बेंट का बड़ा सा सुन्दर चाकू रक्खा था, एक कोने में एक घोड़े की पुरानी नाल पड़ी थी और इसी तरह की कितनी ही अजीबोग़रीब चीजें वहाँ थीं जिनका औचित्य हम लोग कभी नहीं समझ पाते थे। इनके साथ ही साथ हमें ज़्यादा दिलचस्पी जिस बात में थी, वह यह कि जाड़ों में मूँगफलियाँ और गर्मियों में ख़रबूज़े वहाँ हमेशा मौजूद रहते थे

और उसका स्वाभाविक परिणाम यह था कि हम लोग भी हमेशा वहां मौजूद रहते थे।

अगर काफ़ी फ़ुरसत हो, पूरा घर अपने अधिकार में हो, चार मित्र बैठे हों तो निश्चित है कि घूम फिर कर वार्ता राजनीति पर आ टिकेगी और जब राजनीति में दिलचस्पी ख़त्म होने लगेगी तो गोष्ठी की वार्ता 'प्रेम' पर आ टिकेगी। कम से कम मध्यवर्ग में तो इन दो विषयों के अलावा तीसरा विषय नहीं होता। माणिक मुल्ला का दख़ल जितना राजनीति में था उतना ही प्रेम में था, लेकिन जहाँ तक साहित्यिक वार्ता का प्रश्न था वे प्रेम को तरजीह दिया करते थे।

प्रेम के विषय में बात करते समय वे कभी-कभी कहावतों को अजब रूप में पेश किया करते थे और उनमें से न जाने क्यों एक कहावत अभी तक मेरे दिमाग में चस्पाँ है, हालांकि उसका सही मतलब न मैं तब समझा था न अब! अक्सर प्रेम के विषय में अपने कड़वे-मीठे अनुभवों से हम लोगों का ज्ञानवर्धन करने के बाद वे ख़रबूज़ा काटते हुए कहते थे—"प्यारे बन्धुओ! कहावत में चाहे जो कुछ हो, प्रेम में ख़रबूज़ा चाहे चाकू पर गिरे चाहे चाकू ख़रबूज़े पर, नुकसान हमेशा चाकू का होता है। अतः जिसका व्यक्तित्व चाकू की तरह तेज़ और पैना हो, उसे हर हालत में इस उलझन से बचना चाहिये।" ऐसी अन्य कहावतें थीं जो याद आने पर बाद में लिखूंगा।

लेकिन जहाँ तक कहानियों का प्रश्न था उनकी निश्चित धारणा थी कि कहानियों की तमाम नस्लों में प्रेम कहानियाँ ही सब से सफल साबित होती हैं अतः कहानियों में रोमांस का अंश ज़रूर होना चाहिए। लेकिन साथ ही हमें अपनी दृष्टि संकुचित नहीं कर लेनी चाहिये और कुछ ऐसा चमत्कार करना चाहिए कि वे समाज के लिये कल्याणकारी अवश्य हों।

जब हम लोग पूछते थे कि यह कैसे सम्भव है कि कहानियाँ प्रेम पर लिखी जांय पर उनका प्रभाव कल्याणकारी हो, तब वे कहते थे कि यही तो चमत्कार है तुम्हारे मार्णिक मुल्ला में जो अन्य किसी कहानीकार में है ही नहीं।

यद्यपि उन्होंने उस समय तक एक भी कहानी लिखी नहीं थी, फिर भी कहानियों के विषय में उनका विशाल अध्ययन था (कम से कम हम लोगों को ऐसा ही लगता था) और उनका कहानी-कला पर पूर्ण अधिकार था।

कहानियों के टेकनीक के बारे में उनका सब से पहला सिद्धान्त था कि आधुनिक कहानी में आदि, मध्य, या अन्त, तीनों में से कोई न कोई तत्व अवश्य छूट जाता है। ऐसा नहीं होना चाहिये। उनका कहना था कि कहानी वही पूर्ण है जिसमें आदि में आदि हो, मध्य में मध्य हो और अन्त में अन्त हो। इनकी व्याख्या वे यों करते थे—कहानी का आदि वह है जिसके पहले कुछ न हो, बाद में मध्य हो। मध्य वह है जिसके पहले आदि हो बाद में अन्त हो। अन्त उसे कहते हैं जिसके पहले मध्य हो, बाद में रद्दी की टोकरी हो।

कहानियों के टेकनीक के बारे में उनका दूसरा सिद्धान्त यह था कि कहानियाँ चाहे छायावादी हों या प्रगतिवादी, ऐतिहासिक हों या अनैतिहासिक, समाजवादी हों या मुस्लिम-लीगी, किन्तु उनसे कोई न कोई निष्कर्ष अवश्य निकलना चाहिये। वह निष्कर्ष समाज के लिये कल्याणकारी होना चाहिये ऐसा उनका निश्चित मत था और इसीलिये यद्यपि उन्होंने जीवन भर कोई कहानी नहीं लिखी पर वे अपने को कथा-साहित्य में निष्कर्षवाद का प्रवर्तक मानते थे।

कथा-शिल्प की पूरी प्रणाली वे इस प्रकार बताते थे।

कुछ पात्र लो, और एक निष्कर्ष पहले से सोच लो, जैसे.....यानी

जो भी निष्कर्ष निकालना हो—फिर अपने पात्रों पर इतना अधिकार रक्खो, इतना शासन रक्खो कि वे अपने आप प्रेम के चक्र में उलझ जाँय और अन्त में वे उसी निष्कर्ष पर पहुँचें जो तुमने पहले से तय कर रक्खा है।

मेरे मन में अक्सर इन बातों पर शंकाएं भी उठती थीं, पर निष्कपवाद के विषय में उन्होंने मुझे समझाया कि हिन्दी में बहुत से कहानीकार इसीलिये प्रसिद्ध हो गये हैं कि उनकी कहानी में कथानक चाहे लंगड़ाता हो, पात्र चाहे पिलपिले हों, लेकिन सामाजिक तथा राजनीतिक निष्कर्ष अद्भुत होते हैं।

मेरी दूसरी शंका कथावस्तु की प्रेम सम्बन्धी अनिवार्यता के विषय में थी। मैं अक्सर सोचता था कि ज़िन्दगी में अधिक से अधिक दस बरस ऐसे होते हैं जब हम प्रेम करते हैं। उन दस बरसों में खाना-पीना, आर्थिक-संघर्ष, सामाजिक जीवन, पढ़ाई-लिखाई, घूमना-फिरना, सिनेमा और साप्ताहिक पत्र, मित्र-गोष्ठी इन सबों से जितना समय बचता है, उतने में हम प्रेम करते हैं। फिर इतना महत्व उसे क्यों दिया जाय। सैर-सपाटा, खोज, शिकार-व्यायाम, मोटर चलाना, रोज़ी-रोजगार, ताँगेवाले, इक्केवाले और पत्रों के सम्पादक, सैकड़ों विषय हैं जिन पर कहानियाँ लिखी जा सकती हैं फिर आखिर प्रेम पर ही क्यो लिखी जाँय।

जब मैंने माणिक मुल्ला से यह पूछा तो सहसा वे भावुक हो गये और बोले—"तुम्हें बंगाली आती है?" मैंने कहा "नहीं, क्यों?" तो गहरी सांस लेकर बोले—"टैगोर का नाम तो सुना ही होगा! उन्होंने लिखा है 'आमार माझारे जे आछे से गो कोनो विरहिणी नारी!' अर्थात् मेरे मन के अन्दर जो बसा है वह कोई विरहिणी नारी है।

और वही विरहिणी नारी अपनी कथा कहा करती है—बार बार, तरह तरह से।" और फिर अपने मत की व्याख्या करते हुए बोले कि विरहिणी नारियाँ भी कई भाँति की होती हैं—अनूढ़ा विरहिणी, ऊढ़ा विरहिणी, मुग्धा विरहिणी, प्रौढ़ा विरहिणी आदि आदि तथा विरह भी कई प्रकार के होते हैं बाह्यपरिस्थिति-जन्य, आन्तरिकमनस्थिति-जन्य इत्यादि। इन सबों पर कहानियाँ लिखी जा सकती हैं और माणिक मुल्ला का चमत्कार यह था कि जैसे बाजीगर मुँह से आग निकाल देता है वैसे ही वे इन कहानियों से सामाजिक कल्याण के निष्कर्ष निकाल देने में समर्थ थे।

हालांकि माणिक मुल्ला के बारे में प्रकाश का मत था कि "यार हो न हो माणिक मुल्ला के मन में भी हिन्दी के अन्य कहानीकारों की तरह नारी के लिये कुछ 'आब्सेशन' है।" पर यह वह कभी माणिक मुल्ला के सामने कहने का साहस नहीं करता था कि वे उसका सही सही जवाब दे सकें और जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं आज तक उनके बारे में सही फैसला नहीं कर पाता हूँ! इसीलिये मैं वे कहानियाँ ज्यों की त्यों आपके सामने प्रस्तुत किये देता हूँ, ताकि आप स्वयम् निर्णय कर लें। इसका नाम 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' क्यों रक्खा गया इसका स्पष्टीकरण भी अन्त में मैंने कर दिया है।

हाँ, आप मुझे इसके लिये क्षमा करेंगे कि इनकी शैली में बोल-चाल के लहज़े की प्रधानता है और मेरी आदत के मुताबिक़ उनकी भाषा रूमानी, चित्रात्मक, इन्द्रधनुष और फूलों से सजी हुई नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि ये कहानियाँ माणिक मुल्ला की है, मैं तो केवल प्रस्तुतकर्ता हूँ, अतः जैसे उनसे सुनी थीं, उन्हें यथासंभव वैसे ही प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा हूँ।

पहली
दोपहर

नमक की अदायगी

अर्थात् जमुना का नमक
माणिक ने कैसे अदा किया ?

उन्होंने सबसे पहली कहानी एक दिन गर्मी की दोपहर में सुनाई थी जब हम लोग लू के डर से कमरा चारों ओर से बन्द करके सर के नीचे भीगी तौलिया रक्खे चुपचाप लेटे थे। प्रकाश और ओंकार ताश के पत्ते बाँट रहे थे और मैं अपनी आदत के मुताबिक़ कोई किताब पढ़ने की कोशिश कर रहा था। माणिक ने मेरी किताब छीन कर फेंक दी और बुज़ुर्गाना लहज़े में कहा—"यह लड़का बिल्कुल निकम्मा निकलेगा। मेरे कमरे में बैठ कर दूसरों की कहानियाँ पढ़ता है। छिः बोल कितनी कहानियाँ सुनेगा।" सभी उठ बैठे और माणिक मुल्ला से कहानी सुनाने का आग्रह करने लगे। अन्त में माणिक मुल्ला ने एक कहानी सुनाई जिसमें उनके कथनानुसार उन्होंने इसका विश्लेषण किया था कि प्रेम नामक भावना कोई रहस्यमय, आध्यात्मिक या सर्वथा वैयक्तिक भावना न होकर वास्तव में एक सर्वथा मानवीय सामाजिक भावना है अतः समाज व्यवस्था से अनुशासित होती है और उसकी नींव आर्थिक-संगठन और वर्ग-सम्बन्ध पर स्थापित है।

नियमानुसार पहले उन्होंने कहानी का शीर्षक बताया —'नमक की अदायगी।' इस शीर्षक पर उपन्यास-सम्राट प्रेमचन्द्र के 'नमक का दारोगा' का काफी प्रभाव मालूम पड़ता था पर कथावस्तु सर्वथा मौलिक थी। कहानी इस प्रकार थी—

माणिक मुल्ला के घर के बगल में एक पुरानी कोठी थी जिसके पीछे एक छोटा सा अहाता था। अहाते में एक गाय रहती थी, कोठी में एक लड़की। लड़की का नाम जमुना था, गाय का नाम मालूम नहीं। गाय बूढ़ी थी, रंग लाल था, सींग नुकीले थे। लड़की की उम्र १५ साल की थी, रंग गेहुँआ था (बढ़िया पंजाबी गेहूँ) और स्वभाव मीठा, हँसमुख और मस्त। माणिक जिनकी उम्र सिर्फ १० बरस की थी उसे जमुनियाँ कह कर भागा करते थे और वह बड़ी होने के नाते जब कभी माणिक को पकड़ पाती थी तो इनके दोनों कान उमेठती और मौके बेमौके चुटकी काट कर इनका सारा बदन लाल कर देती। माणिक मुल्ला निस्तार की कोई राह न पाकर चीख़ते थे, माफ़ी माँगते थे और भाग आते थे।

लेकिन जमुना के दो काम माणिक मुल्ला के सिपुर्द थे। इलाहाबाद से निकलने वाली जितनी सस्ते क़िस्म की प्रेम कहानियों की पत्रिकाएं होती थीं वे जमुना उन्हीं से मँगवाती थी और शहर के किसी भी सिनेमाघर में अगर नयी तस्वीर आई तो उसकी गाने की किताब भी माणिक को खरीद लानी पड़ती थी। इस तरह जमुना का घरेलू पुस्तकालय दिनों दिन बढ़ता जा रहा था।

समय बीतते कितनी देर लगती है। कहानियाँ पढ़ते-पढ़ते और सिनेमा के गीत याद करते-करते जमुना २० बरस की हो गई और माणिक १५ बरस के, और भगवान की माया देखो कि जमुना का ब्याह ही कहीं तय नहीं हुआ। वैसे बात चली। पास ही रहने वाले महेसर

दलाल के लड़के तन्ना के बारे में सारा मुहल्ला कहा करता था कि जमुना का ब्याह इसी से होगा, क्योंकि तन्ना और जमुना में बहुत पटती थी, तन्ना जमुना की बिरादरी का भी था, हालांकि कुछ नीचे गोत का था और सबसे बड़ी बात यह थी कि महेसर दलाल से सारा मुहल्ला डरता था। महेसर बहुत ही झगड़ालू, घमण्डी और लम्पट था, तन्ना उतना ही सीधा, विनम्र और सच्चरित्र और सारा मुहल्ला उसकी तारीफ़ करता था।

लेकिन जैसा पहले कहा जा चुका है कि तन्ना थोड़े नीच गोत का था, और जमुना का ख़ान्दान सारी बिरादरी में खरे और ऊँचे होने के लिये प्रख्यात था अतः जमुना की माँ की राय नहीं पड़ी। चूँकि जमुना के पिता बैंक में साधारण क्लर्क मात्र थे और तनख़्वाह से क्या आता जाता था, तीज-त्यौहार, मूड़न-देवकाज में हर साल जमा रक़म ख़र्च करनी पड़ती थी अतः जैसा हर मध्यम-श्रेणी के कुटुम्ब में पिछली लड़ाई में हुआ है, बहुत जल्दी सारा जमा रुपया खर्च हो गया और शादी के लिये कानी कौड़ी नहीं बची।

और बेचारी जमुना तन्ना से बातचीत टूट जाने के बाद खूब रोई, खूब रोई। फिर आँसू पोंछे, फिर सिनेमा के नये गीत याद किये और इस तरह से होते-होते एक दिन २० की उम्र को भी पार कर गई। और माणिक का यह हाल कि ज्यों-ज्यों जमुना बढ़ती जाये त्यों-त्यों वह इधर-उधर दुबली मोटी होती जाये और ऐसी कि माणिक को भली भी लगे और बुरी भी। लेकिन एक उसकी बुरी आदत पड़ गई थी कि चाहे माणिक मुल्ला उसे चिढ़ायें या न चिढ़ायें वह उन्हें कोने-अतरे में पाते ही इस तरह दबोचती थी कि माणिक मुल्ला का दम घुटने लगता था और इसीलिये माणिक मुल्ला उसकी छाँह से कतराते थे।

नमक की अदायगी

लेकिन क़िस्मत की मार देखिये कि उसी समय मुहल्ले में धर्म की लहर चल पड़ी और तमाम औरतें जिनकी लड़कियाँ अनब्याही रह गई थीं, जिनके पति हाथ से बेहाथ हुए जा रहे थे, जिनके लड़के लड़ाई में चले गये थे, जिनके ज़ेवर बिक गये थे, जिन पर कर्ज़ हो गया था, सभी ने भगवान की शरण ली और कीर्तन शुरू हो गये और कण्ठियाँ ली जाने लगीं। माणिक की भाभी ने भी हनुमान चौतरा वाले ब्रह्मचारी जी से कण्ठी ली और नियम से दोनों वक्त भोग लगाने लगीं और सुबह शाम पहली टिक्की गऊ माता के नाम सेकने लगीं। घर में गऊ थी नहीं अतः कोठी की बूढ़ी गाय को वह टिक्की दोनों वक्त खिलाई जाती थी। दोपहर को तो माणिक स्कूल चले जाते थे, दिन का वक्त रहता था अतः भाभी खुद चादर ओढ़ कर गाय को रोटी खिला आती थीं पर रात को माणिक मुल्ला को ही जाना पड़ता था।

गाय के अहाते के पास जाते हुए माणिक मुल्ला की रूह काँपती थी। जमुना का कान खींचना उन्हें अच्छा नहीं लगता था (और अच्छा भी लगता था !) अतः डर के मारे राम का नाम लेते हुए खुशी खुशी वे गैय्या के अहाते की ओर जाया करते थे।

एक दिन ऐसा हुआ कि माणिक मुल्ला के यहाँ मेहमान आये और खाने पीने में ज्यादा रात बीत गयी। माणिक सो गये तो उनकी भाभी ने उन्हें जगा कर टिक्की दी और कहा—"गैय्या को दे आओ।" माणिक ने काफ़ी बहानेबाज़ी की लेकिन उनकी एक न चली। अन्त में आँख मलते-मलते अहाते के पास पहुँचे तो क्या देखते हैं कि गाय के पास भूसे वाली कोठरी के दरवाजे पर कोई छाया बिल्कुल कफ़न जैसे सफ़ेद कपड़े पहने खड़ी है। इनका कलेजा मुँह को आने लगा, पर इन्होंने सुन रक्खा था कि भूत प्रेत के आगे आदमी को हिम्मत

बाँधे रहना चाहिये और उसे पीठ नहीं दिखलानी चाहिये वरना उसी समय आदमी का प्राणान्त हो जाता है।

मालिक मुल्ला सीना ताने और काँपते हुए पाँवों को सम्हालते हुए आगे बढ़ते गये और वह औरत वहाँ से अदृश्य हो गई। उन्होंने बार-बार आँखें मल कर देखा वहाँ कोई नहीं था। उन्होंने सन्तोष की साँस ली, गाय को टिक्की दी और लौट चले। इतने में उन्हें लगा कि कोई उनका नाम लेकर पुकार रहा है। माणिक मुल्ला भली भाँति जानते थे कि भूत प्रेत मुहल्ले भर के लड़कों का नाम जानते थे अतः उन्होंने रुकना सुरक्षित नहीं समझा। लेकिन आवाज़ नजदीक आती गई और सहसा किसी ने पीछे से आकर माणिक मुल्ला का कालर पकड़ लिया। माणिक मुल्ला गला फाड़ कर चीख़ने ही वाले थे कि किसी ने उनके मुँह पर हाथ रख दिया। वे स्पर्श पहचानते थे। जमुना!

लेकिन जमुना ने कान नहीं उमेठे। कहा—"चले आओ।" माणिक मुल्ला बेबस थे। चुपचाप चले गये और बैठ गये। अब माणिक भी चुप और जमुना भी चुप। माणिक जमुना को देखें, जमुना माणिक को देखे और गाय उन दोनों को देखे। थोड़ी देर बाद माणिक ने घबरा कर कहा—"हमें जाने दो जमुना!" जमुना ने कहा—"बैठो, बातें करो माणिक। बड़ा मन घबराता है।"

माणिक फिर बैठ गये। अब बातें करें तो क्या करें? उनके क्लास में उन दिनों भूगोल में स्वेज़ नहर, इतिहास में सम्राट जलालुद्दीन अकबर, हिन्दी में 'इत्यादि की आत्मकथा' और अंग्रेजी में 'रेड राइडिंग हुड' पढ़ाई जा रही थी, पर जमुना से इसकी बातें क्या करें। थोड़ी देर बाद माणिक ऊब कर बोले—"हमें जाने दो जमुना, नींद लग रही है।"

"अभी कौन रात बीत गई है। बैठो!" कान पकड़ कर जमुना बोली। माणिक ने घबरा कर कहा—"नींद नहीं लग रही है भूख लग रही है।"

"भूख लग रही है। अच्छा, जाना मत! मैं अभी आई!" कह जमुना फौरन पिछवाड़े के सहन में से होकर अन्दर चली गई। माणिक के समझ में नहीं आया कि आज जमुना एकाएक इतनी दयावान क्यों हो रही है, कि इतने में जमुना लौट आई और आँचल के नीचे से दो चार पुए निकालते हुए बोली—"लो खाओ। आज तो माँ भागवत की कथा सुनने गई हैं।" और जमुना उसी तरह माणिक को अपनी तरफ खींच कर पुए खिलाने लगी।

एक ही पुआ खाने के बाद माणिक मुल्ला उठने लगे तो जमुना बोली—"और खाओ।" तो माणिक मुल्ला ने उसे बताया कि उन्हें मीठे पुए नहीं अच्छे लगते उन्हें बेसन के नमकीन पुए अच्छे लगते हैं।

"अच्छा कल तुम्हारे लिये बेसन के नमकीन पुए बना रक्खूँगी। कल आओगे? कथा तो सात रोज तक होगी।" माणिक ने सन्तोष की साँस ली। उठ खड़े हुए। लौट कर आये तो भाभी सो रही थी। माणिक मुल्ला चुपचाप गऊमाता का ध्यान करते हुए सो गये।

दूसरे दिन माणिक मुल्ला ने चलने की कोशिश की, क्योंकि उन्हें जाने में डर भी लगता था और वे जाना भी चाहते थे और न जाने कौन सी चीज थी जो अन्दर ही अन्दर उनसे कहती थी—"माणिक! यह बहुत बुरी बात है। जमुना अच्छी लड़की नहीं!" और उनके ही अन्दर कोई दूसरी चीज थी जो कहती थी—"चलो माणिक! तुम्हारा क्या बिगड़ता है। चलो देखें होता क्या है?" और इन दोनों से बड़ी चीज थी नमकीन बेसन का पुआ जिसके लिये नासमझ माणिक मुल्ला अपना लोक परलोक दोनों बिगाड़ने के लिये तैयार थे।

उस दिन माणिक मुल्ला गये तो जमुना ने धानी रंग की वाइल की साड़ी पहनी थी, अरगण्डी की पतली ब्लाउज़ पहनी थी, दो चोटियाँ की थीं, माथे पर चमकती हुई बिन्दी लगाई थी। माणिक अक्सर देखते थे कि जब लड़कियाँ स्कूल जाती थीं तो ऐसे सजधज कर जाती थीं, घर में तो मैली धोती पहन कर फर्श पर बैठ कर बातें किया करती थीं, इसलिये उन्हें बड़ा ताज्जुब हुआ। बोले—"जमुना क्या अब स्कूल से लौट रही हो?"

"स्कूल? स्कूल जाना तो माँ ने चार साल से छुड़ा दिया। घर में बैठी-बैठी या तो कहानियाँ पढ़ती हूँ या सोती हूँ।" माणिक मुल्ला के समझ में नहीं आया कि जब दिन भर सोना ही है तो इस सजधज की क्या जरूरत है। माणिक मुल्ला आश्चर्य से मुँह खोले देखते रहे कि जमुना बोली—"आँख फाड़-फाड़ कर क्या देख रहे हो। असली जरमनी की अरगण्डी है। चाचा कलकत्ते से लाये थे; ब्याह के लिये रक्खी थी। यह देखो छोटे-छोटे फूल भी बने हैं।"

माणिक मुल्ला को बहुत आश्चर्य हुआ उस अरगण्डी को छू कर जो कलकत्ते से आई थी, असली जरमनी की थी और जिस पर छोटे-छोटे फूल बने थे।

माणिक मुल्ला जब गाय को टिक्की खिला चुके तो जमुना ने बेसन के नमकीन पुए निकाले मगर कहा—"पहले बैठ जाओ तब खिलायेंगे।" माणिक चुपचाप बैठ चले गये। जमुना ने छोटी सी बैटरी जला दी पर माणिक मारे डर के काँप रहे थे। उन्हें हर क्षण यही लगता था कि भूसे में से अब साँप निकला, अब बिच्छू निकला, अब काँतर निकली। रुँधते गले से बोले—"हम खायेंगे नहीं। हमें जाने दो।"

जमुना बोली—"कैथे की चटनी भी है।" अब माणिक मुल्ला मजबूर हो गये। कैथा उन्हें विशेष प्रिय था। अन्त में साँप बीछी के

के भय का निरोध करके किसी तरह वे बैठ गये। फिर वही आलम कि जमुना को माणिक चुपचाप देखें और माणिक जमुना को और गाय इन दोनों को। जमुना बोली, "कुछ बात करो माणिक।" जमुना चाहती थी माणिक कुछ उसके कपड़े के बारे में बातें करें पर जब माणिक नहीं समझे तो वह खुद बोली—"माणिक, यह कपड़ा अच्छा है?" "बहुत अच्छा है जमुना!" माणिक बोले। "पर देखो, तन्ना है न, वही अपना तन्ना। उसी के साथ जब बातचीत चल रही थी तभी चाचा कलकत्ते से ये सब कपड़े लाये थे। ५००) के कपड़े थे। पंचम बनिया से एक सेट गिरवीं रख के कपड़े लाये थे, फिर बात टूट गई। अभी तो मैं उसी के यहाँ गई थी। अकेले मन घबराता है। लेकिन अब तो तन्ना बात भी नहीं करता। इसीलिये कपड़े भी बदले थे।"

"बात क्यों टूट गई जमुना"?

"अरे तन्ना बहुत डरपोक है। मैंने तो माँ को राजी कर लिया था पर तन्ना को महेसर दलाल ने बहुत डांटा। तब से तन्ना डर गया। और अब तो तन्ना ठीक से बोलता भी नहीं।" माणिक ने कुछ जवाब नहीं दिया तो फिर जमुना बोली--"असल में तन्ना बुरा नहीं है पर महेसर बहुत कमीना आदमी है और जब से तन्ना की माँ मर गई तब से तन्ना बहुत दुखी रहता है।" फिर सहसा जमुना ने स्वर बदल दिया और बोली-"लेकिन फिर तन्ना ने मुझे आसरे में क्यों रक्खा। माणिक, अब न मुझे खाना अच्छा लगता है न पीना। स्कूल जाना छूट गया है। दिन भर रोते रोते बीतता है। हाँ, माणिक।" और उसके बाद वह चुपचाप बैठ गई। माणिक बोले—"तन्ना बहुत डरपोक था। उसने बड़ी गलती की!" तो जमुना बोली-"दुनिया में यही होता आया है!" और उदाहरण-स्वरूप उसने कई कहानियाँ सुनाईं जो उसने पढ़ी थीं या चित्रपट पर देखी थीं।

माणिक उठे तो जमुना ने पूछा कि "रोज आओगे न।" माणिक ने आनाकानी की तो जमुना बोली—"देखो, माणिक तुमने नमक खाया है और नमक खाकर जो अदा नहीं करता उस पर बहुत पाप पड़ता है क्योंकि ऊपर भगवान देखता है और सब बही में दर्ज करता रहता है।" माणिक विवश हो गये और उन्हें रोज़ जाना पड़ा और जमुना उन्हें बिठा कर रोज़ तन्ना की बातें करती रही।

"फिर क्या हुआ!" जब हम लोगों ने पूछा तो माणिक बोले—"एक दिन वह तन्ना की बातें करते करते मेरे कन्धे पर सर रख कर खूब रोई, खूब रोई और जब चुप हुई तो आंसू पोंछे और एकाएक मुझसे वैसी बातें करने लगी जैसी कहानियों में लिखी होती हैं। मुझे बड़ा बुरा लगा और सोचा अब कभी उधर नहीं जाऊंगा पर मैंने नमक खाया था और ऊपर भगवान सब देखता है। हां यह ज़रूर था कि जमुना के रोने पर मैं चाहता था कि उससे अपने स्कूल की बातें बताऊं अपनी किताबों की बातें बता कर उसका मन बहलाऊं पर वह आंसू पोंछ कर कहानियों जैसी बातें करने लगे। यहाँ तक कि एक दिन मेरे मुंह से भी वैसी ही बातें निकल गईं।"

"फिर क्या हुआ!" हम लोगों ने पूछा।

"अजब बात हुई। असल में इन लोगों को समझाना बहुत मुश्किल है। जमुना चुपचाप मेरी ओर देखती रही और फिर रोने लगी। बोली—"मैं बहुत ख़राब लड़की हूँ। मेरा मन घबराता था इसीलिये तुमसे बात करने आती हूँ, पर मैं तुम्हारा नुकसान नहीं चाहती। अब मैं नहीं आया करूँगी।" लेकिन दूसरे दिन जब मैं गया तो देखा फिर जमुना मौजूद है।

फिर माणिक मुल्ला को रोज़ जाना पड़ा। एक दिन, दो दिन, तीन दिन, चार दिन, पाँच दिन यहाँ तक कि हम लोगों ने ऊब कर पूछा कि अन्त में हुआ क्या तो माणिक मुल्ला बोले—"कुछ नहीं, होता क्या ? जब मैं जाता तो मुझे लगता कोई कह रहा है माणिक उधर मत जाओ—वह बहुत खराब रास्ता है पर मैं जानता था कि मेरा कुछ बस नहीं है। और धीरे धीरे मैंने देखा कि न मैं वहां जाये बिना रह सकता था न जमुना आये बिना !"

"हाँ यह तो ठीक है पर फिर इसका अन्त क्या हुआ ?"

"अन्त क्या हुआ ?" माणिक मुल्ला ने ताने के स्वर में कहा—"तब तो तुम लोग खूब नाम कमाओगे। अरे क्या प्रेम कहानियों के दो चार अन्त होते हैं। एक ही तो अन्त होता है। नायिका का विवाह हो गया, माणिक मुल्ला मुँह देखते रह गये। अब इसी को चाहे जितने ढंग से कह लो।"

बहरहाल इतनी दिलचस्प कहानी का इतना साधारण अन्त हम लोगों को पसन्द नहीं आया।

फिर भी प्रकाश ने पूछा—"लेकिन इससे यह कहाँ साबित हुआ कि प्रेम भावना की नींव आर्थिक सम्बन्धों पर है और वर्ग संघर्ष उसे प्रभावित करता है।"

"क्यों ? यह तो बिल्कुल स्पष्ट है।" माणिक मुल्ला ने कहा—"अगर हरेक के घर में गाय होती तो यह स्थिति कैसे पैदा होती। सम्पत्ति की विषमता ही इस प्रेम का मूल कारण है। न उनके घर गाय होती, न मैं उनके यहाँ जाता, न नमक खाता, न नमक अदा करना पड़ता।"

"लेकिन फिर इससे सामाजिक कल्याण के लिये क्या निष्कर्ष निकला ?" हम लोगों ने पूछा।

"बिना निष्कर्ष के मैं कुछ नहीं लिखता मित्रो ! इससे यह निष्कर्ष निकला कि हर घर में एक गाय होनी चाहिये जिसमें राष्ट्र का पशु-धन भी बढ़े, सन्तानों का स्वास्थ्य बने। पड़ोसियों का भी उपकार हो और भारत में फिर से दूध दही की नदियां बहें।"

यदि हम लोग आर्थिक आधार वाले सिद्धान्त से सहमत नहीं थे पर यह निष्कर्ष हम सबों को बहुत पसन्द आया और हम लोगों ने प्रतिज्ञा की कि बड़े होने पर एक एक गाय अवश्य पालेंगे।

इस प्रकार माणिक मुल्ला की प्रथम निष्कर्षवादी प्रेम कहानी समाप्त हुई।

अनध्याय

इस कहानी ने वास्तव में हम लोगों को बहुत प्रभावित किया था। गर्मी के दिन थे। मुहल्ले के जिस हिस्से में हम लोग रहते थे उधर छतें बहुत तपती थीं अतः हम सभी लोग हकीम जी के चबूतरे पर सोया करते थे।

रात को जब हम लोग लेटे तो नींद नहीं आ रही थी और रह रह कर जमुना की कहानी हम लोगों के दिमाग में घूम जाती थी और कभी कलकत्ते की अरगण्डी और कभी बेसन के पुए की याद करके हम लोग हँस रहे थे।

इतने में श्याम भी हाथ में एक बंसखट लिये और बगल में दरी-तकिया दबाये हुए आया। वह दोपहर की मजलिस में शामिल नहीं था अतः हम लोगों को हँसते देख उसे उत्सुकता हुई और उसने पूछा कि माणिक मुल्ला ने कौन सी कहानी हम लोगों को बताई है। जब

हम लोगों ने जमुना की कहानी उसे बताई तो आश्चर्य से देखा गया कि बजाय हँसने के वह सहसा उदास हो गया। हम लोगों ने एक स्वर से पूछा कि 'कहो श्याम इस कहानी को सुनकर दुखी क्यों हो गये? क्या तुम जमुना को जानते थे!' तो श्याम रुँधे हुए गले से बोला—"नहीं मैं जमुना को नहीं जानता, लेकिन आज ६० प्रतिशत लड़कियाँ जमुना की ही परिस्थिति में हैं। वे बेचारी क्या करें। तन्ना से उसकी शादी हो नहीं पाई, उसके बाप दहेज जुटा नहीं पाये, शिक्षा और मन बहलाव के नाम पर उसे मिलीं 'मीठी कहानियाँ', 'सच्ची कहानियाँ', 'रसभरी कहानियाँ', तो बेचारी और कर ही क्या सकती थी। यह तो रोने की बात है, इसमें हँसने की क्या बात? दूसरे पर हँसना नहीं चाहिये। हर घर में मट्टी के चूल्हे होते हैं, आदि आदि?"

श्याम की बात सुन कर हम सबों का जी भर आया और धीरे धीरे हम लोग सो गये।

---

*

दूसरी दोपहर

घोड़े की नाल

अर्थात् किस प्रकार घोड़े की नाल
सौभाग्य का लक्षण सिद्ध हुई ?

दूसरे दिन खा पीकर हम लोग फिर उस बैठक में एकत्रित हुए और हम लोगों के साथ श्याम भी आया। जब हम लोगों ने माणिक मुल्ला से बताया कि श्याम जमुना की कहानी को सुन कर रोने लगा था तो श्याम झेंप कर बोला—"मैं कहाँ रो रहा था !" माणिक मुल्ला हँसे और बोले कि—"हमारी ज़िन्दगी में ज़रा सा पर्त उखाड़ कर देखो तो हर तरफ इतनी गन्दगी और कीचड़ छिपा हुआ है कि सचमुच उस पर रोना आता है लेकिन प्यारे बन्धुओ मैं तो इतना रो चुका हूँ कि अब आँख में आँसू आता ही नहीं अतः लाचार होकर हँसना पड़ता है। एक बात और है। जो लोग भावुक होते हैं और सिर्फ रोते हैं, वे रो धो कर रह जाते हैं, पर जो लोग हँसना सीख लेते हैं वे कभी कभी हँसते हँसते उस जिन्दगी को बदल भी डालते हैं।"

फिर ख़रबूजे काटते हुए बोले—"हटाओ जी इन बातों को। लो आज जौनपुरी ख़रबूज़े हैं। इनकी महक तो देखो। गुलाब मात है। क्या है श्याम? क्यों मुँह लटकाये बैठे हो? अजी मुँह लटकाने से क्या होता है। मैं अभी तुम्हें बताऊँगा कि जमुना का विवाह कैसे हुआ?"

हम लोग तो यह सुनना ही चाहते थे अतः एक स्वर से बोल उठे—"हाँ, हाँ, आज जमुना के विवाह की कहानी रहे।" पर माणिक मुल्ला बोले—"नहीं, पहले ख़रबूज़े के छिलके बाहर फेंक आओ।" जब हम लोगों ने कमरा साफ़ कर दिया तो माणिक मुल्ला ने सबको आराम से बैठ जाने का आदेश दिया, ताख पर से घोड़े की पुरानी नाल उठा लाये और उसे हाथ में लेकर ऊपर उठा कर बोले—

"यह क्या है?"

"घोड़े की नाल।" हम लोगों ने एक स्वर से उत्तर दिया।

"ठीक!" माणिक मुल्ला ने जादूगर की तरह नाल को आश्चर्य-जनक तेज़ी से उँगली पर नचाते हुए कहा—"यह नाल जमुना के वैवाहिक जीवन का एक महत्वपूर्ण स्मृति-चिन्ह है। तुम लोग पूछोगे कैसे? वह मैं पूरे विस्तार में बताता हूँ।

और माणिक मुल्ला ने विस्तार में जो बताया वह संक्षेप में इस प्रकार है।

जब बहुत दिनों तक जमुना की शादी नहीं तय हो पाई और निराश होकर उसकी माँ पूजा पाठ करने लगीं और पिता बैंक में ओवरटाइम करने लगे तो एक दिन अकस्मात उनके घर दूर की एक रिश्तेदार रामो बीबी आईं और उन्होंने बीज छीलते हुए कहा—"हरे

राम राम ! बिटिया की बाढ़ तो देखो । जैसन नाम तैसन करनी । भादों की जमुना अस फाटी पड़त है ।" और फिर झुक कर माँ के कान में धीमे से बोलीं—"एकर बियाह उआह कहूँ नाही तय कियो ।" जब माँ ने बताया कि बिरादरी वाले दहेज बहुत माँग रहे हैं, कहीं जात परजात में दे देने तो अच्छा है कि माँ बेटी गले से रस्सी बाँध कर कुएँ में गिर पड़ें तो रामो बीबी फौरन तमक कर बोलीं—"ऐहै ! कैसी कुभाखा जिभ्या से निकालत हो जमुना की अम्मा ! कहत कुच्छौ नाहीं लगत । अरे कुएँ में गिरैं तुम्हरे दुसमन, कुएँ में गिरै अड़ोस पड़ोस वाले, कुएँ में गिरैं तन्ना और महेसर दलाल, दुसरे का सुख देख के जिनका हिया फाटत है ।" बहरहाल हुआ यह कि रामो बीबी ने फौरन अपनी कुर्ती में से अपने भतीजे की कुण्डली निकाल कर दी और कहा—"बखत पड़े पर आदमियै आदमी के काम आवत है । जो हारे गाढ़े कबौ काम न आवै ऊ आदमी के रूप में जनावर है । अब ई हमरा भतीजा है । घर का अकेला, न सास न ससुर, न ननद न जिठानी, कौनो किचाइन नाहीं है घर में । नाना ओके नाम जागीर लिख गये हैं । घरे में घोड़ा है, तांगा है । पुराना लामी खान्दान है । लड़की रानी महारानी अस बिलसिहै ।"

जब शाम को जमुना की माँ ने यह खबर बाप को दी तो उसने सामने से थाली खसका दी और कहा—"उसकी दो बीबियाँ मर चुकी है । तेहाजू है लड़का । मुझसे ४-५ बरस छोटा होगा ।"

"थाली काहे खसका दी । न खाओ मेरी बला से । क्यों नहीं ढूँढ़ के लाते ? जब लड़की की उमर मेरे बराबर हो रही है तो लड़का कहाँ से ११ साल का मिल जायगा ।" इस बात को लेकर पति और पत्नी में बहुत कहा सुनी हुई । अन्त में जब पत्नी पान बना कर ले गई

और पति को समझा कर कहा—"लड़का तिहाजू है तो क्या हुआ। मरद और दीवार— जितना पानी खाते हैं उतना पुख़्ता होते हैं।"

जब जमुना के द्वारे बारात चढ़ी तो माणिक मुल्ला ने उसे देखा और उन्होंने उस पुख़्ता दीवार का जो वर्णन दिया उससे हम लोग लोट पोट हो गये। जमुना ने उसे देखा तो बहुत रोई, जेवर चढ़ा तो बहुत खुश हुई—चलने लगी तो यह आलम था कि आँखों से आँसू नहीं थमते थे और हृदय में उमंगें नहीं थमती थीं।

जब जमुना लौट कर मैके आई तो सभी सखियों के यहाँ गई, अंग अंग पर जेवर लदा था, रोम रोम पुलकित था और पति की तारीफ़ करते जबान नहीं थकती थी। "अरी कम्मो वो तो इतने सीधे हैं कि जरा सा तीन-पाँच नहीं जानते। ऐ, जैसे छोटे से बच्चे हों। पहली दोनों के मैके वाले सारी जायदाद लूट ले गये, नहीं तो धन फटा पड़ता था। मैंने कहा अब तुम्हारे साले साली आवेंगे तो बाहर ही से बिदा करूँगी, तुम देखते रहना। तो बोले 'तुम घर की मलकिन हो। सुबह शाम दाल रोटी दे दो बस मुझे क्या करना है।' चौबीसों घण्टा मुँह देखते रहते हैं। जरा सा कहीं गई—बस सुनती हो, ओजी सुनती हो, अजी कहाँ गईं। मेरा तो नाक में दम है कम्मो! मुहल्ला पड़ोस वाले देख देख कर जलते हैं। मैंने कहा—जितना जलोगे उतना जलाऊँगी। मैं भी तब दरवाजा खोलती हूँ जब धूप सर पर चढ़ आता है। और ख्याल इतना रखते हैं कि मैं आई तो ढाई सौ रुपये जबर्दस्ती ट्रंक में रख दिये। कहा हमारी क़सम है जो इसे न लेजाओ।"

लेकिन जमुना को जल्दी ही ससुराल लौट जाना पड़ा क्योंकि एक दिन उसके श्वसुर बहुत परीशान हालत में रात को आठ बजे बैंक से लौटे और बताया कि हिसाब में एक सौ सत्ताइस रुपया तेरह आने की कमी पड़ गई है

अगर कल सुबह जाते ही उन्होंने जमा न कर दिया तो हिरासत में ले लिये जायँगे। यह सुनते ही घर में सियापा छा गया और जमुना ने झट से ट्रंक से नोट की गड्डी निकाल कर छप्पर में खोंस दी और जब माँ ने कहा—"बेटी उधार दे दो!" तो ताली माँ के हाथ में देकर बोली—"देख न लो, सन्दूक में दो चार दुअन्नियाँ पड़ी होंगी।" लेकिन जमुना ने सोचा आज बला टल गई तो टल गई, आखिर बकरे की माँ कब तक खैर मनायेगी। इतना तो पहले लुट गया है अब अगर जमुना भी माँ बाप पर लुटा दे तो अपने बाल-बच्चों के लिये क्या बचायेगी! अरे माँ बाप कै दिन के हैं! उसे सहारा तो उसके बच्चे ही देंगे न!

यहाँ पर माणिक मुल्ला कहानी कहते कहते रुक गये और हम लोगों की ओर देख कर बोले—"प्यारे मित्रो! हमेशा याद रक्खो कि नारी पहले माँ होती है तब और कुछ! इसका जन्म ही इसलिये होता है कि वह माँ बने। सृष्टि का क्रम आगे बढ़ावे। यही उसकी महानता है। तुमने देखा कि जमुना के मन में पहले अपने बच्चों का ख्याल आया।"

अस्तु, जमुना अपने भावी बाल बच्चों का खयाल करके अपनी ससुराल चली गई और सुख से रहने लगी! सच पूछो तो यहीं जमुना की कहानी का खात्मा होता है।

"लेकिन आपने तो घोड़े की नाल दिखाई थी। इसका तो जिक्र आया ही नहीं!"

"ओह! मैंने सोचा देखूँ तुम लोग कितने ध्यान से सुन रहे हो।" और तब उन्होंने उस नाल की घटना भी बताई।

असल में जमुना के पति तिहाजू थे यानी पुख़्ता दीवार, पर उनमें और जमुना में उतना ही अन्तर था जितना पलस्तर उखड़ी हुई पुरानी दीवार और लिपे-पुते तुलसी के चौतरे में। इधर उधर के लोग इधर उधर की बातें करते थे पर जमुना तन मन से पति-परायणा थी। पति भी जहाँ उसके गहने-कपड़े का ध्यान रखते थे वहीं उसे भजनामृत, गंगा-माहात्म्य, गुटका रामायण आदि ग्रन्थ-रत्न लाकर दिया करते थे और वह भी उसमें 'उत्तम के अस बस मन माहीं' आदि पढ़ कर लाभान्वित हुआ करती थी। होते होते यह हुआ कि धर्म का बीज उसके मन में जड़ पकड़ गया और भजन-कीर्तन, कथा-सत्संग में उसका चित्त रम गया और ऐसा रमा कि सुबह-शाम दोपहर-रात वह दीवानी घूमती रहे। रोज उसके यहाँ साधु सन्तों का भोजन होता रहे और साधु सन्त भी ऐसे तपस्वी और रूपवान कि मस्तक से प्रकाश फूटता था।

वैसे उसकी भक्ति बहुत निष्काम थी किन्तु जब साधु-सन्त उसे आशीर्वाद दें कि 'सन्तानवती भव' तो वह उदास हो जाया करे। उसके पति उसे बहुत समझाया करते थे कि—'अजी यह तो भगवान की माया है इसमें उदास क्यों होती हो?' लेकिन सन्तान की चिन्ता उन्हें भी थी क्योंकि इतनी बड़ी जागीर-जमींदारी का वारिस कोई नहीं था। अन्त में एक दिन वे और जमुना दोनों एक ज्योतिषी के यहाँ गये जिसने जमुना को यह बताया कि उसे कार्तिक भर सुबह गंगा नहा कर चण्डी देवी को पीले फूल और ब्राह्मणों को चना जौ और सोने का दान करना चाहिये।

जमुना इस अनुष्ठान के लिये तत्काल राजी हो गई। लेकिन इतनी सुबह किसके साथ जाय। जमुना ने पति (जमींदार साहब) से कहा

कि वे साथ चला करें पर वे ठहरे बूढ़े आदमी, सुबह जरा सी ठण्डी हवा लगते ही उन्हें खाँसी का दौरा आ जाता था। अन्त में यह तय हुआ कि रामधन तांगे वाला, शाम को जल्दी छुट्टी ले लिया करेगा और सुबह ४ बजे आकर तांगा जोत दिया करेगा।

जमुना नित्य नियम से नहाने जाने लगी,। कातिक में काफी सर्दी पड़ने लगती है और घाट से मन्दिर तक उसे केवल एक पतली रेशमी धोती पहन कर फूल चढ़ाने जाना पड़ता था। वह थरथर थरथर कांपती थी। एक दिन मारे सरदी के उसके हाथ पैर सुन्न पड़ गये और वह वहीं ठण्डी बालू पर बैठ गई और यह कहो कि रामधन अगर उसे समूची उठा कर तांगे पर न बैठा देता तो वह वहीं बैठी बैठी ठण्ड से गल जाती।

अन्त में रामधन से न देखा गया। उसने एक दिन कहा—"बहू जी आप काहे जान देय पर उतारू हौ। ऐसन तपिस्या तो गौरा माइयो नैं किहिन होइहैं। बड़े बड़े जोतसी का कहा कर लियो अब एक गरीब मनई का भी कहा कै लेव!" जमुना के पूछने पर उसने बताया—जिस घोड़े के माथे पर सफेद तिलक हो, उसके अगले बाएँ पैर की घिसी हुई नाल चन्द्रग्रहण के समय अपने हाथ से निकाल कर उसकी अंगूठी बनवा कर पहन ले तो सभी कामना पूरी हो जाती है।

लेकिन जमुना को यह स्वीकार नहीं हुआ क्योंकि पता नहीं चन्द्रग्रहण कब पड़े। रामधनी ने बताया कि चन्द्रग्रहण तो तीन दिन बाद ही है। लेकिन कठिनाई यह है कि नाल अभी नया लगवाया है वह तीन दिन के अन्दर कैसे घिसेगा और नया नाल कुछ प्रभाव नहीं रखता।

"तो फिर क्या हो रामधन। तुम्हें कोई जुगत बताओ!"

"मालकिन एक ही जुगत है !"

"क्या ?"

"तांगा रोज कम से कम १२ मील चले।" लेकिन मालिक कहीं जाते नहीं। अकेले मुझे तांगा ले नहीं जाने देंगे। आप चलें तो ठीक रहे।"

"लेकिन हम १२ मील कहाँ जायँगे ?"

"क्यों नहीं सरकार ! आप सुबह जरा और जल्दी दो ढाई बजे निकल चलें। गंगा पार पक्की सड़क है, १२ मील घुमा कर ठीक टाइम पर हाज़िर कर दिया करूँगा। तीन दिन की तो बात है।"

जमुना राज़ी हो गई और तीन दिन तक रोज़ तांगा गंगापार चला जाया करता था। रामधन का अंन्दाज ठीक निकला और तीसरे दिन चन्द्रग्रहण के समय नाल उतरवा कर अँगूठी बनवाई गई और अंगूठी का प्रताप देखिये कि जमींदार साहब के यहाँ नौबत बजने लगी और नर्स ने पूरे १०१) की बख़शीश ली।

जमींदार बेचारे वृद्ध हो चुके थे और उन्हें बहुत कष्ट था, वारिस भी हो चुका था अतः भगवान ने उन्हें अपने दरबार में बुला लिया। जमुना पति के बिछोह में धाड़ें मार मार कर रोई, चूड़ी कंगन फोड़ डाले, खाना पीना छोड़ दिया। अन्त में पड़ोसियों ने समझाया कि छोटा बच्चा है उसका मुँह देखना चाहिये। जो होना था, सो हो गया। काल बली है। उस पर किसका बस चलता है। पड़ोसियों के बहुत समझाने पर जमुना ने आँसू पोंछे। घर-बार सम्हाला। इतनी बड़ी कोठी थी, अकेले रहना एक विधवा महिला के लिये अनुचित था अतः उसने रामधन को भी एक कोठरी दी और पवित्रता से जीवन व्यतीत करने लगी।

जमुना की कहानी ख़त्म हो चुकी थी। लेकिन हम लोगों को शंका थी कि माणिक मुल्ला को यह घिसी नाल कहाँ से मिली, उसका तो अंगूठी बन चुकी थी। पूछने पर मालूम हुआ कि एक दिन कहीं रेल सफ़र में माणिक मुल्ला को रामधन मिला। सिल्क का कुर्त्ता, पान का डब्बा; बड़े ठाठ थे उसके। माणिक मुल्ला को देखते ही उसने अपने भाग्योदय की सारी कथा सुनाई और कहा कि सचमुच घोड़े की नाल में बड़ी तासीर होती है। और फिर उसने एक नाल माणिक मुल्ला के पास भेज दी थी, यद्यपि उन्होंने उसकी अंगूठी न बनवा कर उसे हिफ़ाज़त से रख लिया।

कहानी सुना कर माणिक मुल्ला श्याम की ओर देखकर बोले—"देखा श्याम, भगवान जो कुछ करता है भले के लिये करता है। आखिर जमुना को कितना सुख मिला। तुम व्यर्थ में दुखी हो रहे थे? क्यों?"

श्याम ने प्रसन्न होकर स्वीकार किया कि वह व्यर्थ में दुखी हो रहा था। अन्त में माणिक मुल्ला बोले—"लेकिन अब बताओ इससे निष्कर्ष क्या निकला?" हम लोगों में से जब कोई नहीं बता सका तो उन्होंने बताया—इससे यह निष्कर्ष निकला कि दुनिया का कोई भी श्रम बुरा नहीं। किसी भी काम को नीची निगाह से नहीं देखना चाहिये चाहे वह तांगा हांकना ही क्यों न हो!

हम सबों को इस कहानी का यह निष्कर्ष बहुत अच्छा लगा और हम सबों ने शपथ ली कि कभी किसी प्रकार के ईमान्दारी के श्रम को नीची निगाह से न देखेंगे चाहे वह कुछ भी क्यों न हो!

इस तरह माणिक मुल्ला की दूसरी निष्कर्षवादी कहानी समाप्त हुई।

अनध्याय

जमुना की जीवन-गाथा समाप्त हो चुकी थी और हम लोगों को उसके जीवन का ऐसा सुखद समाधान देख कर बहुत सन्तोष हुआ। ऐसा लगा कि जैसे सभी रसों की परिणति शान्त या निर्वेद में होती है, वैसे ही उस अभागिनी के जीवन के सारे संघर्ष और पीड़ा की परिणति मातृत्व से प्लावित, शान्त, निष्कम्प दीपशिखा के समान प्रकाशमान, पवित्र, निष्कलंक वैधव्य में हुई।

रात को जब हम लोग हकीम जी के चबूतरे पर अपनी अपनी खाट और बिस्तरा लेकर एकत्रित हुए तो जमुना की जीवन गाथा हम सबों के मस्तिष्क पर छाई हुई थी। और उसको लेकर जो बातचीत तथा वाद विवाद हुआ उसका नाटकीय विवरण इस प्रकार है :—

मैं—(खाट पर बैठ कर, तकिये को उठा कर गोद में रखते हुए) भाई कहानी बहुत अच्छी रही।

ओंकार—(जमहाई लेते हुए) रही होगी।

प्रकाश—(करवट बदल कर) लेकिन तुम लोगों ने उसका अर्थ भी समझा!

श्याम—(उत्साह से) क्यों, उसमें कौन कठिन भाषा थी।

प्रकाश—यही तो माणिक मुल्ला की खूबी है। अगर जरा सा सचेत होकर उनकी बात तुम समझते नहीं गये तो फौरन तुम्हारे हाथ से तत्व निकल जायगा, हल्का फुल्का भूसा हाथ आयेगा। अब यह बताओ कि कहानी सुनकर क्या भावना उठी तुम्हारे मन में ? तुम बताओ ?

मै—(यह समझ कर कि ऐसे अवसर पर थोड़ी आलोचना करना विद्वत्ता का परिचायक है) भई, मेरे तो यही समझ में नहीं आया कि माणिक मुल्ला ने जमुना ऐसी नायिका की कहानी क्यों कही ? शकुन्तला जैसी भोली-भाली या राधा जैसी पवित्र नायिका उठाते, या अगर बड़े आधुनिक बनते हैं तो सुनीता जैसी साहसी नायिका उठाते, या देवसेना, शेखर की शशी-वशी तमाम टाइप मिल सकते थे।

प्रकाश—(सुकरात की सी टोन में) लेकिन यह बताओ कि जिन्दगी में अधिकांश नायिकाएँ जमुना ऐसी मिलती हैं या राधा और सुधा और गेसू और सुनाता और देवसेना जैसी !

मैं—(चालाकी से अपने को बचाते हुए) पता नहीं ! मेरा नायिकाओं के बारे में कोई अनुभव नहीं। यह तो आप ही बता सकते हैं।

श्याम—भाई हमारे चारो ओर दुर्भाग्य से ६० प्रतिशत लोग तो जमुना और रामधन की तरह के होते हैं। पर इससे क्या ! कहानीकार को शिवम् का चित्रण करना चाहिये।

प्रकाश—यह तो ठीक है। पर अगर किसी जमी हुई झील पर आधा इंच बर्फ़ है और नीचे अथाह पानी और वहीं एक गाइड खड़ा है जो उस पर से आने वालों को आधा इंच बर्फ़ की तो सूचना दे देता है और नीचे के अथाह पानी की ख़बर नहीं देता तो वह राहगीरों को धोखा देता है या नहीं ?

मैं—क्यों नहीं ?

प्रकाश—और अगर वे राहगीर बर्फ़ टूटने पर अथाह पानी में डूब जायें तो इसका पाप गाइड पर पड़ेगा न !

श्याम—और क्या ?

प्रकाश—बस मानिक मुल्ला भी तुम्हारा ध्यान उस अथाह पानी की ओर दिला रहे हैं जहाँ मौत है, अन्धेरा है, कीचड़ है, गन्दगी है। या तो दूसरा रास्ता बनाओ नहीं तो डूब जाओ। लेकिन आधी इंच ऊपर जमी बर्फ़ कुछ काम न देगी। एक ओर नये लोगों का यह रोमानी दृष्टिकोण, यह भावुकता; दूसरी ओर बूढ़ों का यह थोथा आदर्श और झूठी अवैज्ञानिक मर्यादा सिर्फ आधी इंच बर्फ़ है, जिसने पानी को ख़ूँख़ार गहराई को छिपा रक्खा है।

मैं—
ओंकार—
प्रकाश— } (ऊब जाते हैं, सोचते हैं कब यह लेक्चर बन्द हो !)

प्रकाश—(उत्साह से कहता जाता है) जमुना निम्न-मध्यवर्ग की एक भयानक समस्या है। आर्थिक नींव खोखली है। उसकी वजह से विवाह, परिवार, प्रेम, सभी की नींवें हिल गई हैं। अनैतिकता छाई हुई है। पर सब उस ओर से आँखें मूदे हैं। असल में पूरी जिन्दगी की व्यवस्था बदलनी होगी !

मैं—(ऊब कर जमुहाई लेता हूँ)

प्रकाश—क्यों ? नींद आ रही है तुम्हें ! मैंने कै बार तुमसे कहा कि कुछ पढ़ो लिखो। सिर्फ उपन्यास पढ़ते रहते हो। गम्भीर चीज़ें पढ़ो। समाज का ढांचा, उसकी प्रगति, उसमें अर्थ, नैतिकता, साहित्य का स्थान.....

मैं—(बात काट कर) मैंने क्या पढ़ा नहीं ? तुम्हीं ने पढ़ा है ! (यह

देख कर कि प्रकाश की विद्वत्ता का रोब लोगों पर जम रहा है, मैं क्यों पीछे रहूँ) मैं भी इसकी मार्क्सवादी व्याख्या दे सकता हूँ—

प्रकाश—क्या ? क्या व्याख्या दे सकते हो ?

मैं—(अकड़ कर) मार्क्सवादी !

ओंकार—अरे यार रहने भी दो !

श्याम—मुझे नींद आ रही है ।

मैं—देखिये असल में इसकी मार्क्सवादी व्याख्या इस तरह हो सकती है । जमुना मानवता का प्रतीक है, मध्यवर्ग (माणिक मुल्ला) तथा सामन्तवर्ग (जमींदार) उसका उद्धार करने में असफल रहे, अन्त में श्रमिक वर्ग (रामधन) ने उसको नई दिशा सुझाई !

प्रकाश—क्या ऽ ऽ ऽ ? (क्षण भर स्तब्ध फिर माथा ठोंक कर) बेचारा मार्क्सवाद भी ऐसा अभागा निकला कि तमाम दुनिया में जीत के झण्डे गाड़ आया और हिन्दुस्तान में आकर इसे बड़े बड़े राहू ग्रस गये । तुम ही क्या, उसे ऐसे ऐसे व्याख्याकार यहाँ मिले हैं कि वह भी अपनी किस्मत को रोता होगा । (जोरों से हँसता है, मै अपनी हँसी उड़ते देख कर उदास हो जाता हूँ)

हकीम जी की पत्नी—(नेपथ्य से) मैं कहती हूँ यह चबूतरा है या सब्ज़ी मण्डी । जिसे देखो खाट उठाये चला आ रहा है । आधी रात तक चख-चख-चख-चख ! कल से सबको निकालो यहाँ से ।

हकीम जी—(नेपथ्य में—काँपती हुई बूढ़ी आवाज में) अरे बच्चे हैं। हँस बोल लेने दे ! तेरे अपने बच्चे नहीं है, दूसरों को क्यों खाने दौड़ती हैं।.. .....

(हम सब पर सकता छा जाता है। मैं बहुत उदास होकर लेट जाता हूँ। नीम पर से नींद की परियाँ उतरती हैं, पलकों पर छम-छम-छम-छम नृत्य करती हैं)

(यवनिका पतन)

तीसरी दोपहर

(शीर्षक माणिक मुल्ला ने नहीं बताया)

हम लोग सुबह सो कर उठे तो देखा कि रात हीं रात सहसा हवा बिलकुल रुक गई है और इतनी उमस है कि सुबह ५ बजे भी हम लोग पसीने से तर थे। हम लोग उठ कर खूब नहाये मगर उमस इतनी भयानक थी कि कोई भी साधन काम न आया। पता नहीं ऐसी उमस इस शहर के बाहर भी कहीं होती है या नहीं। पर यहाँ तो जिस दिन ऐसी उमस होती है उस दिन सभी काम रुक जाते हैं। सरकारी दफ्तरों में क्लर्क काम नहीं कर पाते, सुपरिन्टेन्डेण्ट बड़े बाबुओं को डाँटते हैं, बड़े बाबू छोटे बाबुओं पर खीझ उतारते हैं, छोटे बाबू चपरासियों से बदला निकालते हैं और चपरासी गालियाँ देते हुए पानी पिलाने वालों से, भिश्तियों से और मालियों से उलझ जाते हैं; दूकानदार माल न बेच कर गाहकों को खिसका देते हैं और रिक्शे वाले इतना किराया मांगते हैं कि सवारियाँ परेशान होकर रिक्शा न करें। और इस तमाम सामाजिक उथल-पुथल के पीछे कोई ऐतिहासिक द्वन्द्वात्मक प्रगति का

सिद्धान्त न होकर केवल तापमान रहता है—टेम्परेचर, उमस, ११२ डिग्री फ़ारिनहाइट !

लेकिन इस तमाम उमस के बावजूद माणिक मुल्ला की कहानियाँ सुनने का लोभ हम लोगों से छूट नहीं पाता था अतः हम सबके सब नियत समय पर वहीं इकट्ठा हुए और मिलने पर सबमें यही अभिवादन हुआ—"आज बहुत उमस है !"

"हाँ जी बहुत उमस है ; ओफ़्फोह !"

सिर्फ़ प्रकाश जब आया और उससे सबने कहा कि आज बहुत उमस है तो फ़लसफ़ा छाँटते हुए अफ़लातून की तरह मुँह बना कर बोला (मेरी इस झल्लाहट भरी टिप्पणी के लिये क्षमा करेंगे क्योंकि पिछली रात उसने मार्क्सवाद के सवाल पर मुझे नीचा दिखाया था और सच्चे सकीर्ण मार्क्सवादियों की तरह मैं झल्ला उठा था और मैंने तय कर लिया था कि वह सही बात भी कहेगा तो मैं उसका विरोध करूँगा)—बहरहाल प्रकाश बोला—"भाई जो उमस हम सबों की ज़िन्दगी में छाई हुई है, जो घुटन हम सबों के मन में छाई हुई है उसके सामने तो यह कुछ नहीं है। हम सभी निम्न-मध्य-श्रेणी के लोगों की ज़िन्दगी में हवा का एक ताज़ा झोंका नहीं। चाहे दम घुट जाय पर पत्ता नहीं हिलता, धूप जिसे रोशनी देना चाहिये हमें बुरी तरह झुलसा रही है और समझ में नहीं आता कि क्या करें। किसी न किसी तरह नई और ताज़ी हवा के झोंके चलने चाहिये। चाहे लूके ही झोंके क्यों न हों ?"

प्रकाश की इस मूर्खताभरी बात पर कोई कुछ न नहीं बोला। (मेरे झूठ के लिये क्षमा करें क्योंकि माणिक ने इस बात की ज़ोरों से ताईद की थी, पर मैंने कह दिया न कि मैं प्रकाश से अन्दर ही अन्दर चिढ़ गया हूँ !)

खैर तो माणिक मुल्ला बोले कि, "जब मैं प्रेम आर्थिक पर प्रभाव की बात करता हूँ तो मेरा मतलब यह रहता है कि वास्तव में आर्थिक ढाँचा हमारे मन पर इतना अजब सा प्रभाव डालता है कि मन की सारी भावनायें उससे स्वाधीन नहीं हो पातीं और हम जैसे लोग जो न उच्च-वर्ग के, हैं न निम्न वर्ग के, उनके यहाँ रूढ़ियाँ, परम्पराएँ, मर्यादाएँ भी ऐसी पुरानी और विषाक्त हैं कि कुल मिला कर हम सबों पर ऐसा प्रभाव पड़ता है कि हम यन्त्र-मात्र रह जाते हैं। हमारे अन्दर उदार और ऊंचे सपने खत्म हो जाते हैं और एक अजब सी जड़ मूर्च्छना हम पर छा जाती है।"

प्रकाश ने जब इसका समर्थन किया तो मैंने इसका विरोध किया और मैंने कहा—"लेकिन व्यक्ति को तो हर हालत में ईमानदार बना रहना चाहिये। यह नहीं कि वह टूटता फूटता चला जाय!"

तो माणिक मुल्ला बोले—"यह सच है, पर जब पूरी व्यवस्था में बेईमानी है तो एक व्यक्ति की ईमानदारी इसी में है कि वह उस व्यवस्था द्वारा लादी गई सारी नैतिक विकृति को भी अस्वीकार करे और उसके द्वारा आरोपित सारी झूठी मर्यादाओं को भी क्योंकि दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू होते हैं। लेकिन हम यह विद्रोह नहीं कर पाते, अतः नतीजा यह होता है कि जमुना की तरह हर परिस्थिति में समझौता करते जाते हैं।"

"लेकिन सभी तो जमुना नहीं होते?" मैंने फिर कहा।

"हाँ, लेकिन जो इस नैतिक विकृति से अपने को अलग रख कर भी इस तमाम व्यवस्था के विरुद्ध नहीं लड़ते, उनकी मर्यादाशीलता सिर्फ परिष्कृत कायरता होती है। संस्कारों का अन्धानुसरण? और ऐसे लोग भले आदमी कहलाये जाते हैं, उनकी तारीफ़ भी होती है, पर

उनकी ज़िन्दगी बेहद करुण और भयानक हो जाती है और सब से बड़ा दुख यह है कि वे भी अपने जीवन का यह पहलू नहीं समझते और बैल की तरह चक्कर लगाते चले जाते हैं। मसलन मैं तुम्हें तन्ना की कहानी सुनाऊँ ? तन्ना की याद है न ? वही महेसर दलाल का लड़का !"

लोग व्यर्थ के वादविवाद से ऊब गये थे अतः माणिक मुल्ला ने कहानी सुनानी शुरू की—

अकस्मात ओंकार ने रोक कर कहा—"इस कहानी का शीर्षक ?" मालिक मुल्ला इस व्याघात से झल्ला उठे और बोले—"हटाओ जी, मैं क्या किसी पत्रिका को कहानी भेज रहा हूँ कि शीर्षक के झगड़े में पड़ूँ। तुम लोग कहानी सुनने आये हो या शीर्षक सुनने ? या मैं उन कहानी लखकों में से हूँ जो आकर्षक विषयवस्तु के अभाव में आकर्षक शीर्षक देकर पत्रों के सम्पादकों और पाठकों का ध्यान खींचा करते हैं !"

यह देख कर कि माणिक मुल्ला ओंकार को डॉट रहे हैं, हम लोगों ने भी ओंकार को डाँटना शुरू किया। यहाँ तक कि जब माणिक मुल्ला ने हम लोगों को डाँटा तो हम लोग चुप हुए और उन्होंने अपनी कहानी प्रारम्भ की:—

तन्ना के कोई भाई नहीं था। पर तीन बहनें थीं। उनमें से जो सब से छोटी थी उसी को जन्म देने के बाद उसकी मां गोलोक चली गई थी। रह गये पिता जो दलाल थे। चूंकि बच्चे छोटे थे, उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं था, अतः तन्ना के पिता महेसर दलाल ने अपनी यह इच्छा जाहिर की किसी भले घर की कोई दबी ढकी सुशील कन्या मिल जाय तो बच्चों का पालन पोषन हो जाय—वरना अब उन्हें क्या बुढ़ापे में कोई औरत का शौक़ चढ़ा है ? राम ! राम !

ऐसी बात सोचना भी नहीं चाहिये । उन्हें तो सिर्फ बच्चों की फिक्र है वरना अब तो बचे खुचे दिन राम के भजन में और गंगा स्नान में काट देने हैं। रही तन्ना की मां, सो तो देवी थी, स्वर्ग चली गई, महेसर दलाल पापी थे सो रह गये। बच्चों का मुंह देख कर कुछ नहीं करते वरना हरद्वार जाकर बाबा काली कमली वाले के भण्डारे में दोनों जून भोजन करते और लोक परलोक सुधारते।

लेकिन महल्ले भर की बड़ी बूढ़ी औरतें कोई ऐसी सुशील कन्या न जुटा पाईं जो बच्चों का भरण पोषण कर सके, अन्त में मजबूर होकर महेसर दलाल एक औरत को सेवा टहल और बच्चों के भरण पोषण के लिये ले आये।

उस औरत ने आते ही पहले महेसर दलाल के आराम की सारी व्यवस्था की, उनका पलंग, बिस्तर, हुक्का चिलम ठीक किया, उसके बाद तीनों लड़कियों के चरित्र और मर्यादा की कड़ी जांच की और अन्त में तन्ना की फ़जूलखर्ची रोकने की पूरी कोशिश करने लगी। बहरहाल उसने तमाम बिखरती हुई गिरिस्ती को बड़े सावधानी से सम्हाल लिया, अब उसमें अगर तन्ना और उसकी तीनों बहिनों को कुछ कष्ट हुआ तो इसके लिये कोई क्या करे ?

तन्ना की बड़ी बहन घर का काम-काज, झाड़ू-बुहारू, चौका-बर्तन किया करती थी, मझली बहन जिसके दोनों पावों की हड्डियां बचपन से ही खराब हो गई थीं, या तो कोने में बैठी रहती थी या आंगन भर में घिसल घिसल कर सभी भाई बहनों को गालियां देती रहती थी, सब से छोटी बहन पंचम बनियां के यहां से तम्बाकू, चीनी, हल्दी, मिट्टी का तेल और मण्डी से अदरक, नीबू, हरीमिर्च, आलू और मूली वगैरह लाने में व्यस्त रहती थी। तन्ना सुबह उठ कर पानी से सारा घर धोते थे, बांस में

झाड़ू बांध कर घर भर का जाला पोंछते थे, हुक्का भरते थे, इतने में स्कूल का वक्त हो जाता था। लेकिन खाना इतनी जल्दी कहां से बन सकता था, अतः बिना खाये ही स्कूल चले जाते थे। स्कूल से लौट कर आने पर उन्हें फिर शाम के लिये लकड़ी चीरना पड़ता था, बुरादे की अंगीठी भरना पड़ता था, दिया-बत्ती करना पड़ता था, बुआ—(उस औरत को सब बच्चे बुआ कहा करें यह महेसर दलाल का हुक्म था) बुआ का बदन भी अक्सर दबाना पड़ता था क्यों कि बेचारी काम करते करते थक जाती थी और तब तन्ना चबूतरे के सामने लगी हुई म्युनिसिपैलिटी की लालटेन के मन्द-मधुर प्रकाश में स्कूल का काम किया करते थे। घर में लालटेन एक ही थी और वह बुआ के ही कमरे में जलती-बुझती रहती थी।

तन्ना का दिल कमजोर था अतः तन्ना अक्सर मां की याद कर-कर रोया करते थे और उन्हें रोते देख कर बड़ी और छोटी बहन भी रोने लगती थीं और मझली अपने दोनों टूटे पैर पटक कर उन्हें गालियाँ देने लगती थी और दूसरे दिन वह बुआ से या बापू से शिकायत कर देती थी और बुआ माथे में आलता बिन्दी लगाते हुए रोती हुई कहती थीं "इन कम्बख्तों को मेरा खाना पीना, उठना बैठना, पहनना ओढ़ना अच्छा नहीं लगता। पानी पी पी कर कोसते रहते हैं। आखिर कौन तकलीफ है इन्हें ! बड़े बड़े नवाब के लड़के ऐसे नहीं रहते जैसे तन्ना बाबू बुल्ला बना के, पाटी पार के, छैल चिकनियों की तरह घूमते हैं।" और उसके बाद महेसर दलाल को परिवार की मर्यादा कायम रखने के लिये तन्ना को बहुत मारना पड़ता था, यहाँ तक कि तन्ना की पीठ में नील उभर आती थी और बुखार चढ़ आता था और दोनों बहनें डर के मारे उनके पास जा नहीं पाती थीं और मझली बहन मारे खुशी के आंगन भर में घसिलती फिरती थी और छोटी बहन से कहती थी "खूब

मार पड़ी। अरे अभी क्या ! राम चाहेंगे तो एक दिन पैर टूटेंगे, कोई मुँह में दाना डालने वाला नहीं रह जायगा। अरी चल आज मेरी चोटी तो कर दे ! आज खूब मार पड़ी है तन्ना को।"

इन हालतों में जमुना की माँ ने तन्ना को बहुत सहारा दिया। उनके यहाँ पूजा पाठ अक्सर होता रहता था और उसमें वे ५ बन्दर और ५ क्वांरी कन्याओं को खिलाया करती थीं। बन्दरों में तन्ना और कन्याओं में उनकी बहनों को आमन्त्रण मिलता था और जाते समय बुआ साफ़-साफ़ कह देती थी कि दूसरों के घर जाकर ननींदों की तरह नहीं खाना चाहिए, आधी पूड़ियाँ बचा कर ले आनी चाहिये। वे लोग यही करते और चूँकि पूड़ी खाने से मेदा ख़राब हो जाता है अतः बेचारी बुआ पूड़ियाँ अपने लिये रख कर रोटी बच्चों को खिला देतीं।

तन्ना को अक्सर किसी न किसी बहाने जमुना बुला लेती थी और अपने सामने तन्ना को बिठा कर खाना खिलाती थी। तन्ना खाते जाते थे और रोते जाते क्योंकि यद्यपि जमुना उनसे छोटी थी पर पता नहीं क्यों उसे देखते ही तन्ना को अपनी माँ की याद आ जाती थी और तन्ना को रोते देख कर जमुना के मन में भी ममता उमड़ पड़ती और जमुना घण्टों बैठ कर उनसे सुख-दुख की बातें करती रहती। होते-होते यह हो गया कि तन्ना के लिये अगर कोई था तो जमुना थी और जमुना को चौबीसों घण्टा अगर किसी की चिन्ता थी तो तन्ना की। अब इसी को चाहे आप प्रेम कह लें या कुछ और !

जमुना की माँ से यह बात छिपी नहीं रही; क्योंकि अपनी उम्र में वे भी जमुना ही रही होंगी—और उन्होंने बुला कर जमुना को बहुत समझाया और कहा कि तन्ना वैसे बहुत अच्छा लड़का है पर नीच

गोत का है और उसके खान्दान में अभी तक अपने से ऊँचे गोत में ही ब्याह हुआ है। पर जब जमुना बहुत रोई और उसने तीन दिन खाना नहीं खाया तो उसकी माँ ने आधे पर तोड़ कर लेने का निर्णय किया यानी उन्होंने कहा कि अगर तन्ना घरजमाई बनाना पसन्द करें तो इस प्रस्ताव पर ग़ौर किया जा सकता है।

पर जैसा पहले कहा जा चुका है कि तन्ना थे ईमानदार आदमी और उन्होंने साफ़ कह दिया कि पिता, कुछ भी हो आखिरकार पिता हैं। उनकी सेवा करना उनका धर्म है। वे घरजमाई जैसी बात भी नहीं सोच सकते। इस बात पर जमुना के घर में काफ़ी संग्राम मचा पर अन्त में जीत जमुना की माँ की ही रही कि जब दहेज होगा तब ब्याह करेंगे, नहीं लड़की क्वाँरी रहेगी। कोई रास्ता नहीं सूझेगा तो लड़की पीपल से ब्याह देंगे पर नीचे गोत वालों को लड़की नहीं देंगे।

जब यह बात महेसर दलाल तक पहुँची तो उनका खून उबल उठा और उन्होंने पूछा.....कहाँ है तन्ना! मालुम हुआ मैच देखने गया है तो उन्होंने चीख़ मार कर कहा ताकि जमुना के घर तक सुनाई दे—"आने दो आज हरामजादे को। खाल न उधेड़ दी तो नाम नहीं। लकड़ी के ठूंठ को साड़ी पहना कर नौबत बजवा कर ले आऊँगा पर इन के यहाँ मैं लड़के का ब्याह करूँगा जिनके यहाँ....." और उसके बाद उनके यहाँ का जो वर्णन महेसर दलाल ने दिया उसे जाने ही दीजिये। बहरहाल बुआ ने तीन दिन तक खाना नहीं दिया और महेसर ने इतना मारा कि मुँह से खून निकल आया और तीसरे दिन भूख से व्याकुल तन्ना छत पर गये तो जमुना की माँ ने उन्हें देखते ही झट से खिड़की बन्द कर ली। जमुना छज्जे पर धोती सुखा रही थी, क्षण भर इनकी ओर देखती रही फिर चुपचाप बिना धोती सुखाए

नीचे उतर गई। तन्ना चुपचाप थोड़ी देर उदास खड़े रहे फिर आँखों में आँसू भरे नीचे उतर आये और समझ गये कि उनका जमुना पर जो भी अधिकार था वह ख़त्म हो गया है और जैसा कहा जा चुका है कि वे ईमानदार आदमी थे अतः उन्होंने कभी उधर का रुख़ भी न किया हालांकि उधर देखते ही उनकी आँखों में आँसू छलक आते थे और लगता था जैसे गले में कोई चीज़ फँस रही हो और सीने में कोई सूजा चला रहा हो। धीरे-धीरे तन्ना का मन भी पढ़ने से उचट गया और वे एफ० ए० के पहले साल में ही फेल हो गये।

महेसर दलाल ने उन्हें फिर खूब मारा, उनकी मँझली बहिन खुश होकर अपने लुंज पुंज पैर पटकने लगी, और हालांकि तन्ना खूब रोये और तन्ना ने दबी ज़बान इसका विरोध भी किया पर महेसर दलाल ने उनका पढ़ना लिखना छुड़ा कर उन्हें आर० एम० एस० में भर्ती करा दिया और वे स्टेशन पर डाक का काम करने लगे। उसी समय महेसर दलाल को एक लड़की.....

(यहाँ पर मैं यह साफ़-साफ़ कह दूँ कि या तो कहानी के विषय वस्तु के कारण हो, या उस दिन की सर्वग्रासी उमस के कारण, लेकिन उस दिन मानिक मुल्ला की कथाशैली में वह चटपटापन नहीं था जो पिछली दो कहानियों में था। अजब ढंग से नीरस शैली में वे विवरण देते चले जा रहे थे और हम लोग भी किसी तरह ध्यान लगाने की कोशिश कर रहे थे। उमस बहुत थी। कहानी में भी, कमरे में भी।)

खैर, तो उसी समय महेसर दलाल की निगाह में एक लड़की आई जिसके बाप मर चुके थे। माँ की अकेली सन्तान थी। माँ की

उम्र चाहे कुछ रही हो पर देख कर यह कहना कठिन था कि माँ बेटी में कौन उन्नीस है कौन बीस। कठिनाई एक थी, लड़की इन्टर के इम्तहान में बैठ रही थी हालांकि उम्र में तन्ना से बहुत छोटी थी, लेकिन मुसीबत यह थी कि उस रूपवती विधवा के पास जमीन जायदाद काफ़ी थी, न कोई देवर था, न कोई लड़का। अतः उसकी सहायता और रक्षा के ख्याल से तन्ना को इन्टरमीडियेट पास बता कर महेसर दलाल ने उस लड़की से तन्ना की बात पक्की कर ली मगर इस शर्त के साथ कि शादी तब होगी जब महेसर दलाल अपनी लड़की को निबटा लेंगे और तब तक लड़की पढ़ेगी नहीं।

चूंकि लड़की की ओर से भी सारा इन्तज़ाम महेसर दलाल को करना था अतः वे ११-१२ बजे रात तक लौट पाते थे और कभी-कभी रात को भी वहीं रह जाना पड़ता था क्योंकि लड़ाई चल रही थी और ब्लैकआउट रहता था, लड़की का घर उसी मुहल्ले की एक दूसरी बस्ती में था जिसमें दोनों तरफ़ फाटक लगे थे, जो ब्लैकआउट में ६ बजते ही बन्द हो जाते थे।

बुआ ने इसका विरोध किया, और नतीजा यह हुआ कि महेसर दलाल ने साफ़ साफ़ कह दिया कि उसके घर में रहने से मुहल्लों में चारों तरफ़ चार आदमी चार तरह की बातें करते हैं। महेसर दलाल ठहरे इज़्ज़तदार आदमी, उन्हें बेटे बेटियों का ब्याह निबटाना है और वे यह ढोल कब तक अपने गले बाँधे रहेंगे। अन्त में हुआ यह कि बुआ जैसे हँसते, इठलाते हुए आई थीं वैसे ही रोते कलपते अपनी गठरी-मुटरी बाँध कर चली गईं और बाद में मालूम हुआ कि तन्ना की माँ के तमाम ज़ेवर और कपड़े जो बहिन की शादी के लिये रक्खे हुए थे, गायब हैं।

इसने तन्ना पर एक भयानक भार लाद दिया। महेसर दलाल का उन दिनों अजब हाल था। मुहल्ले में यह अफ़वाह फैली हुई थी कि महेसर दलाल जो कुछ करते हैं वह एक साबुन बेचने वाली लड़की को दे आते हैं। तन्ना को पैदा घर का भी सारा खर्च चलाना पड़ता था, ब्याह की तैयारी भी करनी पड़ती थी, दोपहर को ए० आर० पी० में काम करते थे, रात को आर० एम० एस० में, और नतीजा यह हुआ कि उनकी आँखें धँस गईं, पीठ झुक गई, रंग झुलस गया और आँखों के आगे काले धब्बे उड़ने लगे।

जैसे तैसे करके बहिन की शादी निबटी। शादी में जमुना आई थी पर तन्ना से बोली नहीं। एक दालान में दोनों मिले तो चुपचाप बैठे रहे। जमुना नाखून से फर्श खोदती रही, तन्ना तिनके से दाँत खोदते रहे। यों जमुना बहुत सुन्दर निकल आई थी और गुजराती जूड़ा बाँधने लगी थी, लेकिन यह कहा जा चुका है कि तन्ना ईमानदार आदमी थे। तन्ना का फलदान चढ़ा तो वह और भी सज-धज से आई और उसने तन्ना से एक ही सवाल पूछा—"भाभी क्या बहुत सुन्दर हैं तन्ना?" "हाँ!" तन्ना ने सहज भाव से बतला दिया तो रुँधते गले से बोली—"मुझसे भी!" तन्ना कुछ नहीं बोले, घबरा कर बाहर चले आये और सुबह के लिये लकड़ी चीरने लगे।

तन्ना की शादी के बाद जमुना ने भाभी से काफ़ी हेलमेल बढ़ा लिया। रोज सुबह शाम आती, तन्ना से बात भी न करती। दिन भर भाभी के पास बैठी रहती। भाभी बहुत पढ़ी लिखी थी, तन्ना से भी ज़्यादा और थोड़ी घमण्डी भी थी। बहुत जल्दी मैके चली गई तो एक दिन जमुना आई और तन्ना से ऐसी-ऐसी बातें करने लगी जैसी उसने कभी नहीं की थीं तो तन्ना ने उसके पाँव छूकर उसे समझाया कि

जमुना तुम कैसी बातें करती हो ? तो जमुना कुछ देर रोती रही और फिर फुफकारती हुई चली गई।

उन्हीं दिनों मुहल्ले में एक अजब सी घटना हुई। जिस साबुन-वाली लड़की का नाम महेसर दलाल के साथ लिया जाता था वह एक दिन मरी हुई पाई गई। उसकी लाश भी गायब कर दी गई और महेसर दलाल पुलिस के डर के मारे जाकर समधियाने में रहने लगे।

तन्ना की ज़िन्दगी अजब सी थी। पत्नी ज्यादा पढ़ी थी, ज्यादा धनी घर की थी, ज्यादा रूपवती थी, हमेशा ताने दिया करती थी, मझली बहन घसिल-घसिल कर गालियाँ देती रहती थी—"राम करे दोनों पाँव में कीड़े पड़े!" अफ़सर ने उनको निकम्मा करार दिया था और उन्हें ऐसी ड्यूटी दे दी थी कि हफ्ते में चार दिन और चार रातें रेल के सफ़र में बीतती थीं और बाकी दिन हेडक्वार्टर में डांट खाते-खाते। उनकी फाइल में बहुत शिकायतें लिख गई थीं। उन्हीं दिनों उनके यहाँ यूनियन बना और वे ईमानदार होने के नाते उससे अलग रहे, नतीजा यह हुआ कि अफ़सर भी नाराज़ और साथी भी।

इसी बीच में जमुना का ब्याह हो गया, महेसर दलाल गुजर गये, पहला बच्चा होने में पत्नी मरते मरते बची और बचने के बाद वह तन्ना से गन्दी छिपकिली से भी ज्यादा नफ़रत करने लगी और छोटी बहन ब्याह के क़ाबिल हो गई और तन्ना सिर्फ इतना कर पाये कि सूख कर काँटा हो गये, कनपटियों के बाल सफ़ेद हो गये, झुक कर चलने लगे, दिल का दौरा पड़ने लगा, आँख से पानी आने लगा और मेदा इतना कमज़ोर हो गया कि एक कौर भी हज़म नहीं होता था।

डाक ले जाते हुए एक बार रेल में नीमसार जाती हुई तीर्थयात्रिणी जमुना मिली। साथ में रामधन था। जमुना बड़ी ममता से पास आकर बैठ गई, उसके बच्चे ने मामा को प्रणाम किया। जमुना ने दोनों को खाना दिया। कौर तोड़ते हुए तन्ना की आँख में आँसू आ गये। जमुना ने कहा भी कि कोठी है, तांगा है, खुली आबहवा है, आकर कुछ दिन रहो, तन्दुरुस्ती सम्हल जायगी पर बेचारे तन्ना! नैतिकता और ईमानदारी बड़ी चीज़ होती है।

लेकिन उस सफ़र से जो तन्ना लौटे तो फिर पड़ ही गये। महीनों बुख़ार आया। रोग के बारे में डाक्टरों की मुखतलिफ़ राय थी। कोई हड्डी का बुखार बताता था, तो कोई खून की कमी, तो कोई कोई टी० बी० भी बता रहा था। घर का यह हाल कि एक पैसा पास नहीं, पत्नी का सारा ज़ेवर लेकर सास अपने घर चली गई छोटी बहन रोया करे, मझली घसिल-घसिल कर कहे "अभी क्या अभी तो कीड़े पड़ेंगे!" सिर्फ यूनियन के कुछ लोग आकर अच्छी भली सलाहें दे जाते थे—साफ हवा में रक्खो, फलों का रस दो, बिस्तर रोज बदल देना चाहिये और बेचारे करते ही क्या।

होते होते जब नौबत यहाँ तक पहुंची कि उन्हें दफ्तर से खारिज कर दिया गया, घर में फ़ाके होने लगे तो उनकी सास आकर अपनी लड़की को लिवा ले गई और बोली जब कमर में बूता नहीं था तो भाँवरें क्यों फिराई थीं और फिर यूनियन फूनियन के गुण्डे आवारे आकर घर में हुड़दंगा मचाते रहते हैं, तन्ना की बहनें उनके सामने चाहे निकलें चाहे नाचें गायें, उसकी लड़की यह पेशा नही कर सकती।

इधर यूनियन उनकी नौकरी के लिये लड़ रही थी और जब वे बहाल हो गये तो लोगों ने सलाह दी, दो हफ्ते के लिये चले जाँय,

बाकी लोग उनका काम करा दिया करेंगे और उसके बाद फिर छुट्टी ले लेंगे।

उनका तन हड्डी का ढाँचा भर रह गया था। चलते हुए आप नज़दीक से पसलियों की खड़खड़ाहट तक सुन सकते थे। किसी तरह हिम्मत बाँध कर गये। अफ़सर लोग चिढ़े हुए थे। मेल ट्रेन पर रात की ड्यूटी लगा दी और वह भी ऐन होली के दिन। रंग में भीगते हुए थर-थर कांपते हुए स्टेशन गये। सारा बदन जल रहा था। काम तो साथियों ने मिल कर कर दिया, वे चुपचाप पड़े रहे। डब्बे में अन्दर सीलन थी। बदन टूट रहा था, नसें ढीली पड़ गई थीं। सुबह हुई। टूंडला आया। थोड़ी-थोड़ी धूप निकल आई थी। वे जाकर दरवाज़े के पास खड़े हो गये। गाड़ी चल दी। पाँव थर-थर कांप रहे थे, सहसा इन्जन के पानी की टंकी की झूलती हुई बालटी इनकी कनपटियों में लगी और फिर इन्हें होश नहीं रहा।

आँख खुली तो टूण्डले के रेलवे अस्पताल में थे। दोनों पाँव नहीं थे। आस पास कोई नहीं था, बेहद दर्द था। खून इतना निकल चुका था कि आँख से कुछ ठीक दिखाई नहीं पड़ता था। सोचा किसी को बुलायें तो मुँह से जमुना का नाम निकला, फिर अपने बच्चे का, फिर बापू (महेसर) का और फिर चुप हो गये।

लोगों ने बहुत पूछा किसे तार दे दें, क्या किया जाय पर वे कुछ नहीं बोले। सिर्फ मरने के पहले उन्होंने अपनी दोनों कटी टाँगें देखने की इच्छा प्रगट की और वे लाई गईं तो ठीक से देख नहीं सकते थे अतः बार-बार उन्हें छूते थे, दबाते थे, उठाने की कोशिश करते थे, और हाथ खींच लेते थे और थर-थर काँपने लगते थे।

पता नहीं मुझे कैसा लगा कि मैं निष्कर्ष सुनने की प्रतीक्षा किये बिना ही चुपचाप उठ कर चला आया।

अनध्याय

बेहद उमस ! मन की गहरी से गहरी पर्त में एक अजब सी बेचैनी। नींद आ भी रही है और नहीं भी आ रही। नीम की डालियाँ खामोश हैं। बिजली के प्रकाश में उनकी छायाएँ मकानों, खपड़ैलों, बारजों और गलियों में सहमी खड़ी हैं।

मेरे अर्द्धसुप्त मन में असम्बद्ध स्वप्न-विचारों का सिलसिला।

स्वर्ग का फाटक। रूप, रेखा, रंग, आकार कुछ नहीं, जैसा अनुमान कर लें। जैसे अतियथार्थवादी कविताएँ जिनका अर्थ कुछ नहीं, जैसा अनुमान कर लें। फाटक पर रामधन बाहर बैठा है। अन्दर जमुना, श्वेत वसना, शान्त, गम्भीर। उसकी विश्रृंखल वासना, उसका वैधव्य, पुरइन के पत्तों पर पड़ी ओस की तरह बिखर चुका है। वह वैसी ही है जैसी तन्ना को प्रथम बार मिली थी।

फाटक पर घोड़े की नालें जड़ी हैं। एक, दो, असंख्य ! दूर धुँधले क्षितिज से एक पतला धुएँ की रेखा सा रास्ता चला आ रहा है। उस पर कोई दो चीजें रेंग रही हैं। रास्ता रह-रह कर काँप उठता है, जैसे तार का पुल।

शीर्षक अज्ञात

बादलों में एक टार्च जल उठती है। राह पर तन्ना चले आ रहे हैं। आगे-आगे तन्ना, कटे पाँवों से घिसलते हुए, पीछे पीछे उनकी दो कटी हुई टाँगें लड़खड़ाती चली आ रही हैं। टाँगों पर आर० एम० एस० के रजिस्टर लदे हैं।

फाटक पर पाँव रुक जाते हैं। फाटक खुल जाते हैं। तन्ना फाइल उठा कर अन्दर चले जाते हैं। दोनों पाँव बाहर छूट जाते हैं। बिस्तुइया की कटी हुई पूँछ की तरह छटपटाते हैं।

कोई बच्चा रो रहा है। वह तन्ना का बच्चा है। दबे हुए स्वरः— यूनियन, एस० एम० आर०, एम० आर० एस०, आर० एम० एस०-यूनियन। दोनों कटे पाँव वापस चल पड़ते हैं, धुएँ का रास्ता तार के पुल की तरह काँपता है।

दूर किसी स्टेशन से कोई डाकगाड़ी छूटती है। .....

चौथी
दोपहर

मालवा की युवरानी
देवसेना की कहानी

आँख लग जाने के थोड़ी देर बाद सहसा उमस चीरते हुए हवा का एक झोंका आया और फिर तो इतने तेज़ झकोरे आने लगे कि नीम की शाखें झूम उठीं। थोड़ी देर में तारों पर एक काला पर्दा छा गया। हवाएं अपने साथ बादल ले आई थीं। सुबह हम लोग बहुत देर तक सोये क्योंकि हवा चल रही थी और धूप का कोई सवाल नहीं था।

पता नहीं देर तक सोने का नतीजा हो या बादलों का—क्योंकि कालिदास ने भी कहा है—"रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च"...पर मेरा मन बहुत उदास सा था और मैं लेट कर कोई किताब पढ़ने लगा, शायद 'स्कन्दगुप्त' जिसमें अन्त में नायिका देवसेना राग विहाग में 'आह वेदना मिली विदाई' गाती है और घुटने टेक कर विदा माँगती है—इस जीवन के देवता और उस जन्म के प्राप्य क्षमा! और उसके बाद अनन्त विरह के साथ पर्दा गिर जाता है।

उसको पढ़ने से मेरा मन और भी उदास हो गया और मैंने सोचा चलो माणिक मुल्ला के यहाँ ही चला जाय। मैं पहुंचा तो देखा कि माणिक मुल्ला चुपचाप बैठे खिड़की की राह बादलों की ओर देख रहे हैं और कुर्सी से लटकाये हुए दोनों पाँव धीरे-धीरे हिला रहे हैं। मैं समझ गया कि माणिक मुल्ला के मन मे कोई बहुत पुरानी व्यथा

जाग गई है क्योंकि ये लक्षण उसी बीमारी के होते हैं। ऐसी हालत में साधारणतया माणिक जैसे लोगों की दो प्रतिक्रियायें होती हैं। अगर कोई उनसे भावुकता की बात करे तो वे फौरन उसकी खिल्ली उड़ायेंगे पर जब वह चुप हो जायेगा तो धीरे-धीरे खुद वैसी ही बातें छेड़ देंगे। यही माणिक ने भी किया। जब मैंने उनसे कहा कि मेरा मन बहुत उदास है तो वे हँसे और मैंने जब कहा कि कल रात के सपने ने मेरे मन पर बहुत बुरा असर डाला है तो वे और भी हँसे और बोले उस सपने से तो दो ही बातें मालूम होती हैं।

"क्या ?" मैंने पूछा।

"पहली तो यह कि तुम्हारा हाज़मा ठीक नहीं है, दूसरे यह कि तुमने डान्टे की डिवाइना कामेडिया पढ़ी है जिसमें नायक को स्वर्ग में नायिका मिलती है और उसे ईश्वर के सिंहासन तक ले जाती है।" जब मैंने झेंप कर यह स्वीकार किया कि दोनों बातें बिल्कुल सच हैं तो फिर वे चुप हो गये और उसी तरह खिड़की की राह बादलों की ओर देख कर पाँव हिलाने लगे। थोड़ी देर बाद बोले—"पता नहीं तुम लोगों को कैसा लगता है, मुझे तो बादलों को देख कर वैसा लगता है जैसा उस घर को देख कर लगता है जिसमें हमने अपना हँसी खुशी से हम बचपन बिताया हो और जिसे छोड़ कर हम पता नहीं कहाँ-कहाँ घूमे हों और भूल कर फिर उसी मकान के सामने बरसों बाद आ पहुंचे हों।" जब मैंने स्वीकार किया कि मेरे मन में भी यही भावना होती है तो और भी उत्साह में भर कर बोले—"देखो, अगर जिन्दगी में फूल न होते, बादल न होते, पवित्रता न होती, प्रकाश न होता, सिर्फ अन्धेरा होता, कीचड़ होता, गन्दगी होती तो कितना अच्छा होता ! हम सब उसमें कीड़े की तरह बिलबिलाते और मर जाते, कभी अन्तःकरण में किसी तरह की छटपटाहट न होती। लेकिन

बड़ा अभागा होता है वह दिन जिस दिन हमारी आत्मा पवित्रता की एक झलक पा लेती है, रोशनी का एक कण पा लेती है क्योंकि उसके बाद सदियों तक अन्धेरे में कैद रहने पर भी रोशनी की प्यास उसमें भर नहीं पाती, उसे तड़पाती रहती है। वह अन्धेरे से समझौता कर ले पर उसे चैन कभी नहीं मिलती।" मैं उनकी बातों से पूर्णतया सहमत था पर लिख चाहे थोड़ा बहुत लूँ, मुझे उन दिनों अच्छी हिन्दी बोलने का इतना अभ्यास नहीं था अतः उनकी उदासी से सहमति प्रकट करने के लिये मैं चुपचाप मुँह लटकाये बैठा रहा या बिल्कुल उन्हीं की तरह मुँह लटकाये हुए बादलों की ओर देखता रहा और नीचे पाँव झुलाता रहा। माणिक मुल्ला कहते गये—"अब यही प्रेम की बात लो। यह सच है कि प्रेम आर्थिक स्थितियों से अनुशासित होता है, लेकिन मैंने जो जोश में कह दिया था कि प्रेम आर्थिक निर्भरता का ही दूसरा नाम है, यह केवल आंशिक सत्य है। इसे कोई अस्वीकार नहीं करे कि प्यार—"यहाँ माणिक मुल्ला रुक गये और मेरी ओर देख कर बोले—"क्षमा करना, तुम्हारी अभ्यस्त शैली में कहूं तो इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि प्यार आत्मा की गहराइयों में सोये हुए सौन्दर्य के संगीत को जगा देता है, हममें अजब सी पवित्रता नैतिक निष्ठा और प्रकाश भर देता है आदि आदि-लेकिन....."

"लेकिन क्या !"मैंने पूछा—

"लेकिन हम सब परम्पराओं, सामाजिक परिस्थितियों, झूठे बन्धनों में इस तरह कसे हुए हैं कि उसे सामाजिक स्तर पर ग्रहण नहीं कर पाते, उसके लिये संघर्ष नहीं कर पाते और बाद में अपनी कायरता और विवशताओं पर सुनहरा पानी फेर कर उसे चमकाने की कोशिश करते रहते हैं। इस रूमानी प्रेम का महत्व होता है, पर मुसीबत यह है कि यह कच्चे मन का प्यार होता है। उसमें सपने, इन्द्रधनुष और फूल तो

काफी मिक़दार में होते हैं पर वह साहस और परिपक्वता नहीं होती जो इन सपनों और फूलों को स्वस्थ सामाजिक सम्बन्ध में बदल सके। नतीजा यह होता है कि थोड़े दिन बाद यह सब मन से उसी तरह गायब हो जाता है जैसे बादल की छांह। आखिर हम हवा में तो रहते नहीं। समाज में रहते हैं और जो भी भावना हमारे सामाजिक जीवन की खाद नहीं बन पाती, ज़िन्दगी उसे झाड़ झंखाड़ की तरह उखाड़ फेंकती है।"

ओंकार श्याम और प्रकाश भी तब तक आ गये थे और हम सब लोग मन ही मन इन्तज़ार कर रहे थे कि माणिकमुल्ला कब अपनी कहानी शुरू करें पर उनकी खोई सी मनस्थिति देख कर हम लोगों को हिम्मत नहीं पड़ रही थी।

इतने में जैसे माणिकमुल्ला खुद हम लोगों के मन की बात समझ गये और सहसा अपने दिवास्वप्नों की दुनिया से लौटते हुए फीकी हँसी हँस कर बोले—"आज मैं तुम लोगों को एक ऐसी लड़की की कहानी सुनाऊँगा जो ऐसे बादलों के दिन मुझे बार-बार याद आ जाती है।" अजब थी वह लड़की!"

इसके बाद माणिक मुल्ला ने जब कहानी प्रारम्भ की तभी मैंने टोंका और उनको यह याद दिलाई कि उनकी पिछली कहानी में समय का विस्तार इतना सीमाहीन था कि घटनाओं का क्रम बहुत तेज़ी से चलता गया और वे विवरण में इतनी तेज़ी से चले कि वैयक्तिक मनोविश्लेषण और मनस्थिति निरूपण पर ठीक से ध्यान नहीं दे पाये। माणिक मुल्ला ने पिछली कहानी की इस कमी को स्वीकार किया, लेकिन लगता है अन्दर ही अन्दर उन्हें कुछ बुरा भी लगा क्योंकि उन्हें चिढ़ कर बहुत कड़ुए स्वर में कहा—"अच्छा लो, आज की कहानी का

घटना काल केवल २४ घण्टे में ही सीमित रहेगा—२६ जुलाई सन् १६... को सांयकाल ६ बजे से ३० जुलाई सायंकाल ६ बजे तक और उसके बाद उन्होंने कहानी प्रारम्भ की—(कहानी कहने के पहले मुझसे बोले—"शैली में तुम्हारी झलक आ जाय तो क्षमा करना।")

खिड़की पर झूलते हुए जार्जेट के हवा से भी हल्के पर्दों को चूमते हुए शाम के सूरज की उदास पीली किरणों ने झांक कर उस लड़की को देखा जो तकिये में मुंह छिपाये सिसक रही थी। उसकी रूखी झलकें खारे आंसू से धुले गालों को छूकर सिहर उठती थीं,। चम्पे की कलियों सी उसकी लम्बी पतली कलात्मक उँगलियां, सिसकियों से कांप कांप उठने वाला उसका सोनजूही सा तन, उसके गुलाब की सूखी पांखुरियों से ओठ, और कमरे का उदास वातावरण! पता नहीं कौन सा वह दर्द था जिसकी उदास उंगलियां रह रह कर उसके व्यक्तित्व के मृणाल तन्तुओं के संगीत को झकझोर रही थी।

थोड़ी देर बाद वह उठी। उसकी आंखों के नीचे एक हल्की फालसई छांह थी जो सूज आई थी। उसकी चाल हंस की थी, पर ऐसे हंस की जो मानसरोवर से न जाने कितने दिनों के लिये विदा ले रहा हो। उसने एक गहरी सांस ली और लगा जैसे हवाओं में केसर के डोरे बिखर गये हों। उठी और खिड़की के पास जाकर बैठ गई। हवाओं से जार्जेट के पर्दे उड़ उड़ कर उसे गुदगुदा जाते थे, कभी कानों के पास, कभी होठों के पास, कभी—ख़ैर!

बाहर सूरज की आखिरी किरनें नीम और पीपल के शिखरों पर सुनहली उदासी बिखेर रही थी। क्षितिज के पास एक गहरी जामुनी पर्त जमी थी, जिस पर गुलाब बिखरे हुए थे और उसके बाद हल्की पीली आंधी की आभा लहरा रही थी।

मालवा की युवरानी देवसेना की कहानी

"आंधी आने वाली है बेटी ! चलो खाना खालो !" मां ने दरवाजे पर से कहा। लड़की कुछ नहीं बोली, सिर्फ सर हिला दिया। मां कुछ नहीं बोली, इसरार भी नहीं किया। मां की अकेली लड़की थी, घर भर में मां और बेटी ही थी, बेटो समझो तो बेटा समझो तो ! बेटी की बात काटने की हिम्मत किसी में नहीं थी। मां थोड़ी देर चुपचाप खड़ी रही, चली गई। लड़की सूनी सूनी आंखों से चुपचाप जामुनी रंग के घिरते हुए बादलों को देखती रही और उन पर धधकते हुए गुलाबों को और उन पर घिरती हुई आंधी को।

शाम ने धुँधलके का सुरमई डुपट्टा ओढ़ लिया। वह चुपचाप वहीं बैठी रही, बेले की बनी हुई कला-प्रतिमा की तरह, निगाहों में रह रह कर नरगिस, उदास और लजीली नरगिस झूम जाती थी।

"कहिये जनाब !" माणिक ने प्रवेश किया तो वह उठी और चुपचाप लाइट आन कर दी--माणिक मुल्ला ने उसकी खिन्न मनस्थिति, उसका अश्रुसिक्त मौन देखा तो रुक गये और गम्भीर होकर बोले—"क्या हुआ ? लिली ! लिली !"

"कुछ नहीं !" लड़की ने हसने का प्रयास करते हुए कहा, मगर आंखें डबडबा आईं और माणिक मुल्ला के पांवों के पास बैठ गई।

माणिक ने उसके बुन्दों में उलझी एक रूखी लाट को सुलझाते हुए कहा—"तो नहीं बताओगी !"

"हम कभी छिपाते हैं तुमसे कोई बात !"

"नहीं, अब तक तो नहीं छिपाती थी, आज से छिपाने लगी हो !"

"नहीं, कोई बात नहीं है। सच मानों !" लड़की ने, जिसका नाम लीला था, लिली नाम से पुकारी जाती थी, माणिक की कमीज के कांच के बटन खोलते और बन्द करते हुए कहा।

"अच्छा मत बताओ ! हम भी अब तुमसे कुछ नहीं बतायेंगे" माणिक ने उठने का उपक्रम करते हुए कहा।

"तो चले कहां—"वह माणिक के कन्धे पर झुक गई—"बताती तो हूँ।"

"तो बताओ !"

लिली थोड़ा झेंप गई और सिर उसने माणिक की हथेली अपनी सूजी पलकों पर रख कर कहा—"हुआ ऐसा कि आज देवदास देखने गये थे। कम्मो भी साथ थी। खैर उसके समझ में आया नहीं। मुझे पता नहीं कैसा लगने लगा। माणिक, क्या होगा, बताओ ! अभी तो एक दिन तुम नहीं आते हो तो न खाना अच्छा लगता है, न पढ़ना फिर महीनों, महीनों तुम्हें नहीं देख पायेंगे। सच वैसे चाहे जितना हंसते रहो, बोलते रहो, घूमते रहो, पर जहां इस बात का ध्यान आया कि मन को जैसे पाला मार जाता है।"

माणिक कुछ नहीं बोले ! उनकी आंखों में एक करुण व्यथा झलक आई और वे चुपचाप बैठे रहे। आंधी आ गई थी और मेज़ के नीचे सिनेमा के दो आधे फटे हुए टिकट आंधी की वजह से तमाम कमरे में घायल तितलियों के जोड़े की तरह इधर उधर उड़ उड़ कर दीवारों से टकरा रहे थे।

माणिक के पांवों पर टप से एक गर्म आंसू चू पड़ा तो उन्होंने चौंक कर देखा। लिली की पलकों में आंसू छलक रहे थे। उन्होंने हाथ पकड़ कर लिली को पास खींच लिया और उसे सामने बिठा कर, उसके दो नन्हें उजले कबूतरों जैसे पावों पर उंगली से धारियां खींचते हुए बोले—"छिः ! यह सब रोना धोना हमारी लिली को शोभा नहीं देता। यह सब कमज़ोरी है, मन का मोह और कुछ नहीं। तुम जानती हो कि मेरे

मन में कभी तुम्हारे लिये मोह नहीं रहा, तुम्हारे मन में मेरे लिये कभी अधिकार की भावना नहीं रही। अगर हम दोनों जीवन में एक दूसरे के निकट आये भी तो इसलिये कि हमारी अधूरी आत्माएँ एक दूसरे को पूर्ण बनायें, एक दूसरे को बल दें, प्रकाश दें, प्रेरणा दें। और दुनिया की कोई भी ताक़त कभी हमसे हमारी इस पवित्रता को छीन नहीं सकती। मैं जानता हूँ कि तमाम जीवन में जहां कहीं भी रहूँगा, जिन परिस्थितियों में भी रहूँगा, तुम्हारा प्यार मुझे बल देता रहेगा फिर तुममें इतनी अस्थिरता क्यों आ रही है। इसके मतलब यह हैं कि पता नहीं मुझ में कौन सी कमी है कि मैं तुम्हें वह आस्था नहीं दे पा रहा हूँ!"

लिली ने आंसू डूबी निगाहें उठाईं और कातरता से माणिक की ओर देखा जिसके अर्थ थे--"ऐसा न कहो, मेरे जीवन में, मेरे व्यक्तित्व में जो कुछ भी है तुम्हारा ही तो दिया हुआ है।" पर लिली ने यह शब्दों से नहीं कहा, निगाहों से कह दिया।

माणिक ने धीरे से उसी के आंचल से उसके आंसू पोंछ दिये। बोले—"जाओ मुँह धो आओ! चलो!" लिली मुँह धोकर आगई। माणिक बैठे हुए रेडियो की सुई इस तरह घुमा रहे थे कि कभी झम से दिल्ली बज उठता था, कभी लखनऊ की दो एक अस्फुट संगीत लहरी सुनाई पड़ जाती थी, कभी नागपुर, कभी कलकत्ता, (इलाहाबाद में सौभाग्य से तब तक रेडियो स्टेशन था ही नहीं!)। लिली चुपचाप बैठी रही फिर उठ कर उसने रेडियो आफ कर दिया और आकुल आग्रह भरे स्वर में बोली—"माणिक कुछ बात करो! मन बहुत घबरा रहा है।"

माणिक हंसे और बोले "अच्छा आओ बात करें, पर हमारी लिली जितनी अच्छी बात कर लेती है, उतनी मैं थोड़े ही कर पाता हूँ। लेकिन खैर! तो तुम्हारी कम्मो के समझ में तस्वीर नहीं आई!"

"उहुंक !"

"कम्मो बड़ी कुन्दज़ेहन है, लेकिन कोशिश हमेशा यही करती है कि सब काम में टांग अड़ाये।"

"तुम्हारी जमुना से तो अच्छी ही है !

जमुना के जिक्र पर माणिक को हंसी आगई और फिर आग्रह से, बेहद दुलार और बेहद नशे से लिली की ओर देखते हुए बोले—"लिली तुमने स्कन्दगुप्त खतम कर डाली !"

"हां !"

"कैसी लगी !"

लिली ने सर हिला कर बताया कि बहुत अच्छी लगी। माणिक ने धीरे से लिली का हाथ अपने हाथों में ले लिया और उसकी रेखाओं पर अपने काँपते हुए हाथ रख कर बोले—मैं चाहता हूँ मेरी लिली उतनी पवित्र, उतनी ही सूक्ष्म, उतनी ही दृढ़ बने जितनी देवसेना थी ! तो लिली वैसी ही बनेगी न।"

किसी मानवोपरि, देवताओं के संगीत से मुग्ध, भोली हिरणी की तरह लिली ने एक क्षण माणिक की ओर देखा और उनकी हथेलियों में मुंह छिपा लिया। बाहर जामुनी बादलियों ने एक हल्की पुहार बिखेरी और नम सोंधी हवा का एक झोंका लिली की बल खाती हुई वेणी को झकझोर गया।

"वाह ! उधर देखो ! लिली !" माणिक ने दोनों हाथों से लिली का मुँह कमल के फूल की तरह उठाते हुए कहा—बाहर गली की बिजली पता नहीं क्यों जल नहीं रही थी, लेकिन रह रह कर बैजनी रंग की बिजलियां चमक जाती थीं और लम्बी पतली गली, दोनों ओर के पक्के मकान, उनके खाली चबूतरे, बन्द खिड़कियां, सूने बारजे, उदास

छूते उन बैंजनी बिजलियों में जाने कैसे जादू के से, रहस्यमय से लग रहे थे। बिजली चमकते ही अन्धेरा चीर कर वे खिड़की से दीख पड़ते, और फिर सहसा अन्धकार में विलीन हो जाते और उस बीच के एक क्षण में भी उनकी दीवारों पर तड़पती हुई बिजली की बैंजनी रोशनी लपलपाती रहती, बारजों की कोरों से पानी की धारें गिरती रहती, खम्भे और बिजली के तार कांपते रहते और हवाओं में बूंदों की झालरें लहराती रहतीं। सारा वातावरण जैसे बिजली के एक क्षीण आघात से कांप रहा था, डोल रहा था।

एक तेज़ झोंका आया और खिड़की के पास खड़ी लिली बौछार से भीग गई, और भौहों से, माथे से बूंदें पोंछती हुई हटी तो माणिक बोले—"लिली, वहीं खड़ी रहो, खिड़की के पास, हां बिलकुल ऐसे ही। बूँदें मत पोंछो—और लिली, यह एक लट तुम्हारी भीग कर झूल आई है, कितनी अच्छी लग रही है।"

लिली कभी चुपचाप लजाती हुई खिड़की के बाहर, कभी लजाती हुई अन्दर, माणिक की ओर देखती हुई बौछार में खड़ी रही। जब बिजलियां चमकतीं तो ऐसा लगता जैसे प्रकाश के झरने में कांपता हुआ नील कमल। पहले माथा भीगा—लिली ने पूछा—"हटें!" माणिक बोले—"नहीं!" माथे से पानी गर्दन पर आया, बूंदें उसके गले में पड़ी सुनहली मटरमाला को चूमती हुई नीचे उतरने लगीं, वह सिहर उठी—"सर्दी लग रही है!" माणिक ने पूछा। एक अजब से अल्हड़ आत्मसमर्पण के स्वर में लिली बोली—"नहीं, सर्दी नहीं लग रही है! लेकिन तुम बड़े पागल हो!"

"हूँ तो नहीं कभी कभी हो जाता हूँ! लिली, एक अंग्रेजी की कविता है—'ए लिली गर्ल नॉट मेड फॉर दिस वर्ल्डस पेन!' एक फूल सी

लड़की जो इस दुनिया के दुःख दर्द के लिये नहीं बनी। लिली यह कवि तुम्हें जानता था क्या ? 'लिली' – तुम्हारा नाम तक लिख दिया है !"

"हूँ ! हमें तो ज़रूर जानता था। तुम्हें भी एक नई बात रोज़ सूझती रहती है।"

"नहीं ! देखो उसने यहां तक तो लिखा है—एण्ड लांगिंग आइज़ हाफ़ वेल्ड विद ग्लम्बरस टीयर्स, लाइक ब्लूएस्ट वाटर्स सीन थ्रू मिस्ट्स आफ़ रेन – लालसा भरी निगाहें, उनीदे आंसुओं से आच्छादित जैसे पानी की बौछार में धुंधली धुँधली दीखने वाली नीली झील·····"

सहसा तड़प कर दूर कहीं बिजली गिरी और लिली चौंक कर भागी और बदहवास माणिक के पास आ गिरी। दो पल तक बिजली की दिल दहला देने वाली आवाज गूँजती रही और लिली सहमी हुई गोरैया की तरह माणिक की बाहों के घेरे में पड़ी रही। फिर उसने आंखें खोली, और झुक कर माणिक के पांवों पर दो गर्म होठ रख दिये। माणिक की आंख में आंसू आगये बाहर बारिश धीमी पड़ गई थी। सिर्फ छज्जों से, खपरैलों से टप टप कर बूँदें चू रही थी। हल्के हल्के बादल अन्धेरे में उड़े जा रहे थे।

सुबह लिली जागी—लेकिन नहीं जागी नहीं—लिली को रात भर नींद आई नहीं थी। उसे पता नहीं कब मां ने उसे खाने के लिये जगाया, उसने कब मना कर दिया, कब और किसने उसे पलंग पर लिटाया—उसे सिर्फ इतना याद है कि रात भर वह पता नहीं किसके पांवों पर सर रख कर रोती रही। तकिया आंसुओं से भीग गया था, आंखें सूज आई थीं।

कम्मो सुबह ही आगई थी। आज लिली को जेवर पहनाया जाने वाला था, शाम को ७ बजे लोग आने वाले थे, सास तो थी नहीं, ससुर आने वाले थे और कम्मो जो लिली की घनिष्ठ मित्र थी उस पर घर

को सजाने और लिली को सजाने का पूरा भार था और लिली थी कि कम्मो के कन्धे पर सर रख कर इस तरह बिलखती थी कि कुछ पूछो मत !

कम्मो बड़ी यथार्थवादिनी, बड़ी ही अभावुक लड़की थी । उसने इतनी सहेलियों की शादियां होते देखी थी पर लीला की तरह बिना बात के बिलख बिलख कर रोते किसी को नहीं देखा था । जब विदा होने लगे उस समय तो रोना ठीक है, वरना चार बड़ी बूढ़ियां कहने लगती हैं कि देखो ! आजकल की लड़कियां हया शरम धो के पी गई हैं । कैसी ऊंट सी गरदन उठाये ससुराल चली जा रही हैं । अरे हम लोग थे तो रोते-रोते भोर हो गई थी और जब हाथ पांव पकड़ के भय्या ने डोली में ढकेल दिया तो बैठे थे । एक ये हैं ! आदि ।

लेकिन इस तरह रोने से क्या फायदा और वह भी तब जब माँ या और लोग सामने न हों । सामने रोये तो एक बात भी है । बहरहाल कम्मो बिगड़ती रही और लिली के आँसू थमते ही न थे !

कम्मो ने काम बहुत जल्दी निबटा लिया लेकिन वह घर में कह आई थी कि अब दिन भर वहीं रहेगी । कम्मो ठहरी घूमने फिरने वाली काम काजी लड़की । उसे खयाल आया कि उसे एलन-गंज जाना है, वहाँ से अपनी कढ़ाई की किताबें वगैरह वापस लानी हैं और फिर उसे एक क्षण चैन नहीं पड़ी । उसने लिली की मां से पूछा, जल्दी से लिली को मार पीटकर जबर्दस्ती तैयार किया और दोनों सखियाँ चल पड़ीं ।

बादल छाये हुए थे और बहुत ही सुहावना मौसम था । सड़कों पर जगह-जगह पानी जमा था । जिनमें चिड़ियां नहा रही थी । एलन-गंज में अपना काम निबटा कर दोनों पैदल टहलने चल दीं । थोड़ी ही दूर आगे बांध था, जिसके नीचे से एक पुरानी रेल की लाइन गई थी जो

अब बन्द पड़ी थी। लाइनों के बीच में घास उग आई थी और बारिश के बाद घास में लाल हीरों की तरह जगमगाती हुई बीरबहूटियां, रेंग रही थीं। दोनों सखियाँ वहीं बैठ गईं—एक बीरबहूटी रह रहकर उस जंग खाये हुए लोहे की लाइन को पार करने की कोशिश कर रही थी और बार-बार फिसल कर गिर जाती थी। लिली थोड़ी देर उसे देखती रही और फिर बहुत उदास होकर कम्मो से बोली—"कम्मो रानी! अब उस पिंजरे से निस्तार नहीं होगा। कहाँ ये घूमना फिरना, कहाँ तुम।" कम्मो जो एक घास की डण्ठल चबा रही थी, तमक कर बोली—"देखो लिल्ली घोड़ी! मेरे सामने ये अंसुआ ढरकाने से कोई फायदा नहीं। समझीं! हमें ये सब चोचला नहीं अच्छा लगता। दुनिया की सब लड़कियाँ तो पैदा होके ब्याह करती हैं, एक तुम अनोखी पैदा हुई हो क्या? और ब्याह के पहले सभी ये कहतीं हैं, ब्याह के बाद भूल भी जाओगी कि कम्मो कमबख़्त किस खेत की मूली थी!

लिली कुछ नहीं बोली, खिसियानी सी हँसी हँस दी। दोनों सखियाँ आगे चलीं। धीरे-धीरे लिली बीरबहूटियाँ बटोरने लगी, सहसा कम्मो ने उसे एक झाड़ी के पास पड़ी सांप की केंचुल दिखाई, फिर दोनों एक बहुत बड़े अमरूद के बाग के पास आईं और दो तीन बरसाती अमरूद तोड़कर खाये जो काफी बकठे थे, और अन्त में पुरानी कब्रों और खेतों में से होती हुई वे एक बहुत बड़े से पोखरे के पास आईं जहाँ धोबियों के पत्थर लगे हुए थे। केंचुल, बीरबहूटी, अमरूद और हरियाली ने लिली के मन को एक अजब सी राहत दी और रो-रोकर थके हुए उसके मन ने उल्लास की एक करवट ली। उसने चप्पल उतार दी और भीगी हुई घास पर टहलने लगी। थोड़ी देर में लिली बिल्कुल दूसरी ही लिली थी, हँसी की तरंगों पर धूप की तरह जगमगाने वाली, और शाम को ५ बजे जब दोनों घर लौटीं तो

उनकी खिलखिलाहट से मुहल्ला हिल उठा और लिली को बहुत कस कर भूख लग आई थी।

दिन भर घूमने से लिली को इतनी जोर की भूख लग आई थी कि आते ही उसने माँ से नाश्ता माँगा और जब अपने आप आलमारी से निकालने लगी तो माँ ने टोका कि खुद खा जायगी तो तेरे ससुर क्या खायँगे तो हँस के बोली—"अरे उन्हें मैं बचा खुचा अपने हाथ से खिला दूँगी। पहले चाख तो लूँ, नहीं बदनामी हो बाद में।" इतने में मालूम हुआ वे लोग आ गये तो झट से वह नाश्ता आधा छोड़कर अन्दर गई। कम्मो ने उसे साड़ी पहनाई, उसे सजाया, सँवारा लेकिन उसे भूख इतनी लगी थी कि उन लोगों के सामने जाने के पहले वह फिर बैठ गई और खाने लगी, यहां तक कि कम्मो ने जबर्दस्ती उसके सामने से तश्तरी हटा ली और उसे खींच ले गई।

दिन भर खुली हवा में घूमने से और पेट भरकर खाने से सुबह लिली के चेहरे पर जो उदासी छाई थी वह बिल्कुल गायब हो गई थी और उन लोगों को लड़की बहुत पसन्द आई और पिछले दिन शाम को उसके जीवन में जो ज़लज़ला शुरू हुआ था वह दूसरे दिन शाम को शान्त हो गया।

इतना कहकर माणिक मुल्ला बोले—"और प्यारे बन्धुओ! देखा तुम लोगों ने! खुली हवा घूमने और सूर्यास्त के पहले खाना खाने से सभी शारीरिक और मानसिक व्याधियां शान्त हो जाती हैं अतः इससे क्या निष्कर्ष निकला?"

"खाओ, बदन बनाओ!" हम लोगों ने उनके कमरे में टँगे मोटो की ओर देखते हुए एक स्वर में कहा!

"लेकिन माणिक मुल्ला!" ओंकार ने पूछा—"यह आपने नहीं

बताया कि लड़की को आप कैसे जानते थे, क्यों जानते थे, कौन थी यह लड़की ?"

"अच्छा ! आप लोग चाहते हैं कि मैं कहानी का घटना काल भी २४ घण्टे रक्खूं और उसमें आपको सारा महाभारत और एनसाइक्लोपीडिया भी सुना जाऊँ ! मै कैसे जानता था इससे आपसे क्या मतलब ? हां यह मैं आपको बता दूँ कि यह लीला वही लड़की थी जिसका ब्याह तन्ना से हुआ था और उस दिन शाम को महेसर दलाल उसे देखने आने वाले थे !"

पाँचवीं दोपहर

काले बेंट का चाकू

अगले दिन दोपहर को जब हम लोग सब मिले तो एक अजब सी मनस्थिति थी हम लोगों की। हम सब इस रंगीन रुमानी प्रेम के प्रति अपना मोह तोड़ नहीं पाते थे, और दूसरी ओर उस पर हँसी भी आती थी, तीसरी ओर एक अजब सी ग्लानि थी अपने मन में कि हम सब, और हम सबके ये कैशोरावस्था के सपने कितने निस्सार होते हैं और इन सभी भावनाओं का संघर्ष हमें एक अजब सी झेंप और झुंझलाहट—बल्कि उसे खिसियाहट कहना बेहतर होगा—की स्थिति में छोड़ गया था। लेकिन माणिक मुल्ला बिल्कुल निर्द्वन्द्व भाव से प्रसन्नचित्त हम लोगों से हंस हंस कर बातें करते जा रहे थे और आलमारी तथा मेज पर से धूल झड़ते जा रहे थे जो रात की आँधी के कारण जम जाती है, और ऐसा लगता था कि जैसे आदमी पुराने फटे हुए मोजों को कूड़े पर फेंक देता है उसी तरह उन्होंने अपने उस सारे रूमानी भ्रम को सारी ममता छोड़ कर फेंक दिया है और उधर मुड़ कर देखने का भी मोह नहीं रक्खा।

सहसा मैंने पूछा—"इस घटना ने तो आपके मन पर बहुत गहरा प्रभाव डाला होगा।"

मेरे इस प्रश्न से उनके चेहरे पर दो चार बहुत करुण रेखायें उभर आईं लेकिन उन्होंने बड़ी चतुरता से अपनी मनस्थिति छिपाते हुए कहा—"मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी, कोई घटना ऐसी नहीं जो आदमी के अन्तर्मन पर गहरी छाप न छोड़ जाय।"

"कम से कम अगर मेरे जीवन में ऐसा हो, तो मेरी तो सारी ज़िन्दगी बिल्कुल मरुस्थल हो जाय। शायद कभी दुनिया की कोई चीज़ मेरे मन में कभी रस का संचार न कर सके।" मैंने कहा।

माणिक मुल्ला मेरी ओर देखकर हंसे और बोले—"इसके यह मतलब हैं कि तुमने अभी न तो ज़िन्दगी देखी है और न अभी अच्छे उपन्यास ही पढ़े हैं। ज्यादातर ऐसा ही हुआ है, और ऐसा ही सुना गया है मित्रवर, कि इस प्रकार की निष्फल उपासना के बाद फिर जिन्दगी में कोई दूसरी लड़की आती है जो बौद्धिक, नैतिक तथा आर्थिक दृष्टि से निम्नतर स्तर की होती है पर जिसमें अधिक ईमानदारी, अधिक चरित्र, अधिक वफादारी और अधिक बल होता है। मसलन शरत चटर्जी के देवदास मुखर्जी को ही ले लो। पारो के बाद उन्हें चन्द्रा मिली। इसी तरह के अन्य कितने ही उदाहरण दिये जा सकते हैं। माणिक मुल्ला को क्या तुम कम समझते हो? या माणिक मुल्ला ने लीला के बाद गांधारी की तरह अपनी आँखों पर जीवन भर के लिये पट्टी बांध लेने की कसम खाली। लेकिन अच्छा होता कि पट्टी ही बांध लेता क्योंकि लिली के बाद सत्ती का आकर्षण मेरे लिये शुभ नहीं हुआ और न उसके ही लिये। लेकिन वह बिल्कुल दूसरी धातु की

थी, जमुना से भी अलग और लिली से भी अलग। बड़ी विचित्र है उसकी कहानी भी..."

"लेकिन मुल्ला भाई ! एक बात मैं कहूँगा, अगर तुम बुरा न मानो तो—"प्रकाश ने बात काट कर कहा—"यह कहानियाँ जो तुम कहते हो बिल्कुल सीधी सादे विवरण की भाँति होती हैं उनमें कुछ कथा-शिल्प, कुछ कांट-छांट, कुछ टेकनीक भी तो होना चाहिये।"

"टेकनीक ! हाँ ! टेकनीक पर ज्यादा जोर वही देता है जो कहीं न कहीं अपरिपक्व होता है, जो अभ्यास कर रहा है, जिसे उचित माध्यम नहीं मिल पाया, लेकिन फिर भी टेकनीक पर ध्यान देना बहुत स्वस्थ प्रवृत्ति है बशर्ते वह अनुपात से अधिक न हो जाय। जहां तक मेरा सवाल है मुझे तो कहानी कहने के दृष्टिकोण से फ्लाबेयर और मोपासा बहुत अच्छे लगते हैं क्योंकि उनमें पाठक को अपने जादू में बांध लेने की ताक़त है, वैसे उनके बाद चेखव कहानी के क्षेत्र में विचित्र व्यक्ति रहा है और मैं उसका लोहा मानता हूँ। चेखव ने एक बार किसी महिला से कहा था—'कहानी कहना कठिन बात नहीं है। आप कोई चीज मेरे सामने रख दें, यह शीशे का गिलास, यह ऐश ट्रे और कहें कि मैं इस पर कहानी कहूँ। थोड़ी देर में मेरी कल्पना जाग्रत हो जायगी और उससे सम्बन्ध कितने लोगों के जीवन मुझे याद आ जायंगे और वह चीज कहानी का सुन्दर विषय बन जायगी।"

मैंने अवसर का लाभ उठाते हुए फौरन वह काले बेंट वाला चाकू ताख पर से उठाया और बीच रखते हुए कहा—"अच्छा इसको सत्ती की कहानी केन्द्र-विन्दु बनाइये !"

"बनाइये !" माणिक मुल्ला गम्भीर होकर बोले—"यह तो उसकी कहानी का केन्द्रविन्दु है ही ! जब मैं यह चाकू देखता हूँ तो मैं

कल्पना करता हूँ इसके काले बेंट पर बहुत सुन्दर फूल की पाँखुरियों जैसे गुलाबी नाखूनों वाली लम्बी पतली अंगुलियाँ, जो आवेश से कांप रही है, एक चेहरा जो आवेश से आरक्त है थोड़ी निराशा से नीला है और थोड़े डर से विवर्ण है ! यह स्मृति-चित्र है सत्ती का जब वह अन्तिम बार मुझे मिली थी और मैं आंख उठाकर उसकी ओर देख भी नहीं सका था। उसके हाथ में यही चाकू था।"

उसके बाद उन्होंने सत्ती की जो कहानी बताई, उसे टेकनीक न निबाह कर मैं संक्षेप में बताये देता हूँ :—

माणिक मुल्ला का कहना था कि वह लड़की अच्छी नहीं कही जा सकती थी, क्योंकि उसके रहन-सहन में एक अजब सी विलासिता झलकती थी, चाल-ढाल भी बहुत उद्दीप्त करने वाली थी, वह हर आने-जाने वाले, परिचित अपरिचित से बोलने बतलाने के लिए उत्सुक रहती थी, गली में चलते-चलते गुनगुनाती रहती थी और अकारण ही लोगों की ओर देख कर मुस्कुरा दिया करती थी।

लेकिन माणिकमुल्ला का कहना था कि वह लड़की बुरी भी नहीं कही जा सकती थी क्योंकि उसके बारे में कोई वैसी अफवाह नहीं थी, और सभी लोग अच्छी तरह जानते थे कि अगर कोई उसकी तरफ वैसी निगाह से देखता तो वह आँखें निकाल सकती थी और उसकी कमर में एक काले बेंट का चाकू हमेशा रहा करता था।

लोगों का यह कहना था कि उसका चाचा जिसके साथ वह रहती थी, रिश्ते में उसका कोई नहीं है, वह असल में फतेहपुर के पास के किसी गांव का नाई है जो सफरमैना पल्टन में भर्ती होकर क्वेटा बलूचिस्तान की ओर गया था और वहाँ किसी गांव के नेस्तनाबूद हो जाने के बाद यह ३,४ बरस की लड़की उसे रोती हुई मिली थी जिसे वह

उठा लाया था और पालने पोसने लगा था। बहुत दिनों तक वह लड़की उधर ही रही, और अन्त में उसका एक हाथ कट जाने के बाद उसे पेंशन मिल गई और वह आकर यहीं रहने लगा। एक हाथ कट जाने से यह अपना पुश्तैनी पेशा तो नहीं कर सकता था, लेकिन उसने यहाँ आकर साबुनसाज़ी शुरू कर दी थी और चमन ठाकुर का पहिया छाप साबुन न सिर्फ मुहल्ले में, वरन् चौक तक की दूकानों पर बेचा जाता था। चूँकि उसका एक हाथ कटा हुआ था, अतः सोलह सत्रह साल की अनिंद्य सुन्दरी सत्ती साबुन जमाती थी, उसके टुकड़े उसी काले बेंट के चाकू से काटती थी, उन्हें दूकानदारों के यहाँ पहुँचाती थी और हर पखवारे के अन्त में आकर उसका दाम वसूल कर लाती थी। हर दूकानदार उसके सर पर बँधे रंगबिरंगे रूमाल, उसके बल्लूचो कुर्ते, उसके चौड़े गरारे की ओर एक दबी निगाह डालता और दूसरे साबुनों के बजाय पहिया छाप साबुन दूकान पर रखता, ग्राहकों से उसकी सिफारिश करता और उसकी यह तमन्ना रहती कि कैसे सत्ती को पखवारे के अन्त में ज्यादा से ज्यादा कलदार दे सके।

चमन ठाकुर कारखाने के बाहर खाट डाल कर नरियल का हुक्का पीते रहते थे और सत्ती अन्दर काम करती थी। श्रम ने सत्ती के बदन में एक ऐसी गठन, चेहरे पर एक ऐसा तेज, बातों में एक ऐसा अदम्य आत्म-विश्वास पैदा कर दिया था कि जब उसे माणिक मुल्ला ने देखा तो उनके मन में ज़िली का अभाव बहुत हद तक भर गया और वे सत्ती के व्यक्तित्व से मंत्रमुग्ध हो गये।

सत्ती से उनकी भेंट अजब ढंग से हुई। कारखाने के बाहर चमन और सत्ती मिलकर गंगा महाजन के यहां का देना पावना जोड़ रहे थे। चमन ने जो कुछ पढ़ा लिखा था वह भूल चुके थे, सत्ती ने थोड़ा पढ़ा था पर यह हिसाब काफी जटिल था। उधर माणिक मुल्ला दही लेकर घर

जा रहे थे कि दोनों को हिसाब पर झगड़ते देखा। सत्ती सर झटकती थी तो उसके कानों के दोनों बुन्दे चमक उठते थे और हँसती थी तो मोती से दांत चमक जाते थे, मुड़ती थी तो कंचन सा बदन झलमला उठता था और सर झुकाती थी तो नागिन सी अलकें झूल जाती थीं। अब अगर माणिक मुल्ला के कदम धरती से चिपक ही गये तो इसमें माणिक मुल्ला का कौन क़सूर ?

इतने में चमन ठाकुर बोले—"जय रामजी की भइया !" और उनके कटे हुए दाएँ हाथ ने जुम्बिश खाई और फिर लटक गया। सत्ती हँस कर बोली—"लो जरा हिसाब जोड़ दो माणिक बाबू !' और माणिक बाबू भाभी के लिए दही ले जाना भूल कर इतनी देर तक हिसाब लगाते रहे कि भाभी ने खूब डांटा। लेकिन उस दिन से अक्सर उनके जिम्मे सत्ती का हिसाब जोड़ना आता रहा और गणित शास्त्र में एका-एक उनकी जैसी दिलचस्पी बढ़ गई उसे देख कर ताज्जुब होता था।

माणिक मुल्ला की गिनती पता नहीं क्यों सत्ती अपने मित्रों में करने लगी। एक ऐसा मित्र जिस पर पूर्ण विश्वास किया जा सकता है। एक ऐसा मित्र जिसे सभी साबुन के नुस्खे निस्सन्देह बताये जा सकते थे। जिसके बारे में पूरा भरोसा था कि वह साबुन के नुस्खों को दूसरी कम्पनी वालों को नहीं बता देगा। जिस पर सारा हिसाब छोड़ा जा सकता था, जिससे यह भी सलाह ली जा सकती थी कि हरधन स्टोर्स को माल उधार दिया जा सकता है या नहीं। माणिक के जाते ही सत्ती सारा काम छोड़कर उठ आती, दरी बिछा देती, जमे हुए साबुन के थाल ले आती और कमर से काला चाकू निकाल कर साबुन की सलाखें काटती जाती और माणिक को दिन भर का सारा दुःख-सुख बताती जाती। किस बनिये ने बेईमानी की, किसने सबसे ज्यादा साबुन बेंचा, कहां किराने की नई दूकान खुली है, वगैरह वगैरह।

माणिक मुल्ला उसके पास बैठ कर एक अजब सी बात महसूस करते थे। इस मेहनत करने वाली स्वाधीन लड़की के व्यक्तित्व में कुछ ऐसा था जो न पढ़ी लिखी भावुक लिली में था और न अधपढ़ी दमित मन वाली जमुना में था। इसमें एक सहज स्वस्थ ममता थी जो हमदर्दी चाहती थी, हमदर्दी देती थी। जिसकी मित्रता का अर्थ था एक दूसरे के दुःख-सुख, श्रम और उल्लास में हाथ बँटाना। उसमें कहीं से कोई गांठ, कोई उलझन, कोई भय, कोई दमन, कोई कमज़ोरी नहीं थी, कोई बंधन नहीं था। उसका मन खुली धूप की तरह स्वच्छ था। अगर उसे लिली की तरह थोड़ी शिक्षा भी मिली होती तो सोने में सुहागा होता। मगर फिर भी उसमें जो कुछ था वह माणिक मुल्ला को आकाश के सपनों में विहार करने की प्रेरणा नहीं देता था, न उन्हें विकृतियों की अन्धेरी खाइयों में गिराता था। वह उन्हें धरती पर सहज मानवीय भावना से जीने की प्रेरणा देती थी। वह कुछ ऐसी भावनाएँ जगाती थी जो ऐसी ही कोई मित्र संगिनी जगा सकती थी जो स्वाधीन हो, जो साहसी हो, जो मध्यवर्ग की मर्यादाओं की शीशों के पीछे सजी हुई गुड़िया की तरह बेजान और खोखली न हो। जो सृजन और श्रम में, सामाजिक जीवन में उचित भाग लेती हो, अपना उचित देय देती हो।

मेरा यह मतलब नहीं कि माणिक मुल्ला उसके पास बैठ कर यह सब चिन्तन किया करते थे। नहीं, यह सब तो उस परिस्थिति का मेरा अपना विश्लेषण है, वैसे माणिक मुल्ला को तो वह केवल बहुत अच्छी लगती थी और उन दिनों माणिक मुल्ला का मन पढ़ने में भी लगने लगा, काम करने में भी, और उनका वजन भी बढ़ गया और उन्हें भूख भी खुल कर लगने लगी, वे कालेज के खेलों में भी हिस्सा लेने लगे।

माणिक मुल्ला ने जरा झेंपते हुए यह भी स्वीकार किया कि उनके मन में सत्ती के लिये बहुत आकर्षण जाग गया था और अक्सर सत्ती की हाथी दांत सी गर्दन को चूमते हुए उसके लम्बे झूलते हुए बुन्दों को देखकर उनके होठ कांपने लगते थे, और माथे की नसों में गर्म खून ज़ोर से दौड़ने लगता था। पर सारी मित्रता के बावजूद कभी सत्ती के व्यवहार में उसे जमुना जैसी कोई बात नहीं दिखाई पड़ी। माणिक की निगाह जब उसके झूलते हुए बुन्दों पर पड़ती और उनका माथा गर्म हो जाता, तभी उनकी निगाह सत्ती की कमर से झूलते हुए चाकू पर भी पड़ती और माथा फिर ठण्डा हो जाता, क्योंकि सत्ती उन्हें बता चुकी थी कि एक बार एक बनिये ने साबुन की सलाखें रखवाते हुए कहा 'साबुन तो क्या मैं साबुन वाली को भी दूकान पर रख लूँ' तो सत्ती ने फौरन चाकू खोल कर कहा—'मुझे अपनी दूकान पर रख और ये चाकू अपनी छाती में रख कमीने।' तो सेठ ने सत्ती के पांव छूकर कसम खाई कि वह तो मजाक कर रहा था, वरना वह तो अपनी पहली ही सेठानी नहीं रख पाया। वही दरबान के साथ चली गई अब भला सत्ती को क्या रक्खेगा।

इसी घटना को याद कर माणिक मुल्ला कभी कुछ नहीं कहते थे पर मन ही मन एक अव्यक्त करुण उदासी उनकी आत्मा पर छा गई थी और उन दिनों वे कुछ कविताएँ भी लिखने लगे थे जो बहुत करुण विरह गीत होती थीं जिनमें कल्पना कर लेते थे कि सत्ती उनसे दूर कहीं चली गई है और फिर वे सत्ती को विश्वास दिलाते थे कि प्रिये, तुम्हारे प्रणय का स्वप्न मेरे हृदय में पल रहा है और सदा पलता रहेगा। कभी कभी वे बहुत व्याकुल होकर लिखते थे जिसका भावार्थ होता था कि मेघों की छाया में तो अब मुझसे तृषित नहीं रहा जाता,

आदि आदि। सारांश यह कि वे जो कुछ सती से नहीं कह पाते थे उसे गीतों में बांध डालते थे पर जब कभी सत्ती के सामने उन्होंने उसे भुनभुनाने का प्रयास किया तो सत्तो हंसते-हंसते लोटपोट हो गई और बोली तुमने बन्ना सुना है? सांझी सुनी है? और तब वह मुहल्ले में गाये जाने वाले गीत इतनी दर्द भरी आवाज़ में गाती थी कि माणिक मुल्ला भाव विभोर हो उठते थे और अपने गीत उन्हें कृत्रिम और शब्दाडम्बरपूर्ण लगने लगते थे। ऐसी थी सत्ती, सदैव निकट, सदैव दूर, अपने में एक स्वतन्त्र सत्ता, जिसके साथ माणिक मुल्ला के मन को सन्तोष भी मिलता था और आकुलता भी।

कभी कभी वे सोचते थे कि अपनी भावनाओं को पत्र के माध्यम से लिख डालें और वे कभी कभी पत्र लिखते भी थे, बहुत लम्बे-लम्बे और बहुत मधुर, यहाँ तक कि अगर वे बचे होते तो उनकी गणना नेपोलियन और सीज़र के प्रेम पत्रों के साथ की जाती, मगर जब उसमें 'आत्मा की ज्योति'—'चांद की राजकुमारी' आदि वे लिख चुकते तो उन्हें ख्याल आता कि यह भाषा तो बेचारी सत्ती समझती नहीं, और जो भाषा उसकी समझ में आती थी उसका व्यवहार करने पर कमर में लटकने वाले काले चाकू की तस्वीर दिमाग़ में आ जाती थी। अतः उन्होंने वे सब खत फाड़ डाले।

उसी बीच में सत्ती की ममता माणिक के प्रति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती गई और जब जब माणिक मुल्ला जाते, बाहर बैठा हुआ चमन ठाकुर अपना कटा हाथ हिला कर उन्हें सलाम करता। हंसता और पीठ पीछे इन्हें बहुत ख़ूनी निगाह से देखकर दांत पीसता और पैर पटक कर हुक्के के अंगारे कुरेदता। सत्ती माणिक के खाने पीने, कपड़े, लत्ते, रहन-सहन में बहुत दिलचस्पी लेती और बाद में अपनी अड़ोसिन-पड़ोसिन से बतलाती कि माणिक १२ वें दर्जे में पढ़ रहे हैं

और इसके बाद बड़े लाट के दफ्तर में इन्हें नौकरी मिल जायगी और हमेशा माणिक को याद दिलाती रहती थी कि पढ़ने में ढीलापन मत करना।

पर एक बात अक्सर माणिक देखते थे कि सत्ती अब कुछ उदास सी रहने लगी है और कोई ऐसी बात है जो वह माणिक से छिपाती है। माणिक ने बहुत पूछा पर उसने नहीं बताया। पर वह अक्सर चमन ठाकुर को झिड़क देती थी, राह में उसकी चिलम पड़ी रहती थी तो उसे ठोकर मार देती थी, खुद कभी हिसाब न करके उसके सामने कापी और वसूली के रुपये फेंक देती थी। चमन ठाकुर ने एक दिन माणिक से कहा कि मैं अगर इसे न लाकर पालता पोसता तो इसे चील और गिद्ध नोच-नोच कर खा गये होते और यही जब माणिक ने सत्ती से कहा तो वह बोली—"चील और गिद्ध खा गये होते तो वह अच्छा होता बजाय इसके कि यह राक्षस उसे नोच खाय!" माणिक ने संशकित होकर पूछा तो वह बहुत झल्ला कर बोली—"यह मेरा चाचा बनता है। इसीलिये पाल पोस कर बड़ा किया था। इसकी निगाह में खोट आ गया है। पर मै डरती नहीं। यह चाकू मेरे पास हमेशा रहता है।" और उसके बाद उन्होंने सत्ती को पहली बार रोते देखा और वह अनाथ मेहनती और निराश्रित लड़की फूट-फूट कर रोई और उसे कई घटनाएं बताईं। यह बात सुनकर माणिक मुल्ला का अपने कानों पर यक़ीन नहीं हुआ पर वे बहुत व्यथित हुए और यह जानकर कि ऐसा भी हो सकता है उनके मन पर बहुत धक्का लगा, उस दिन शाम को उनसे खाना नहीं खाया गया और यह सोचकर उनके आंख में भी आंसू आगये कि यह जिन्दगी इतनी गन्दी और विकृत क्यों है।

उसके बाद उन्होंने देखा कि सत्ती और चमन ठाकुर में कटुता

बढ़ती ही गई, साबुन का रोज़गार भी ठण्डा होता गया और अक्सर माणिक के जाने पर सत्ती रोती हुई मिलती और चमन ठाकुर चीख़ते गरजते हुए मिलते। वे रिटायर्ड सोल्जर थे अतः कहते थे—शूट कर दूँगा तुझे। संगीन से दो टुकड़े कर दूँगा। तूने समझा क्या है? आदि आदि।

सत्ती के चेहरे पर थोड़ी खुशी उस दिन आई जिस दिन उसे मालूम हुआ कि माणिक १२वां दर्जा पास हो गये हैं। उसने उस दिन महीनों बाद पहली बार चमन ठाकुर से जाकर दो रुपये मांगे, एक की मिठाई मंगाई और दूसरी के फूल बताशे चण्डी के चौतरे पर चढ़ा आई पर उस दिन माणिक आये ही नहीं। जिस दिन माणिक आये उस दिन उसे यह जान कर बड़ी निराशा हुई कि माणिक नौकरी नहीं करेंगे, बल्कि पढ़ेंगे, हालांकि भैय्या भाभी ने साफ मना कर दिया है कि अब जमाना बुरा है और वे माणिक का खर्चा नहीं उठा सकते। सत्ती की राय भैय्या भाभी के साथ थी, क्योंकि वह अपनी आंख से माणिक को बड़े लाट के दफ्तर में देखना चाहती थी, पर जब उसने माणिक की इच्छा पढ़ने की देखी तो कहा उदास मत हो। अगर मैं यहीं रही तो तुम्हें रुपये दूँगी। अगर नहीं रही तो देखा जायगा।

माणिक मुल्ला ने घबरा कर पूछा कि 'कहां जाओगी तुम' तो सत्ती ने एक और बात बताई जिससे माणिक स्तब्ध रह गये।

महेसर दलाल, यानी जमुना वाले तन्ना का पिता, अक्सर आया करता था और चूंकि दलाल होने के नाते उनकी सुनारों और सर्राफों से काफी जान पहचान थी अतः वह गिलट के कड़े और पायल पर पालिश कराकर और चांदी के गहनों पर नकली सुनहरा पानी चढ़वा कर लाता था और सत्ती को देने की कोशिश करता था। जब माणिक मुल्ला ने पूछा कि चमन ठाकुर कुछ नहीं कहते तो बोली कि रोज़गार

तो पहले ही चौपट हो चुका है, चमन गांजा और दारू खूब पीता है। महेसर दलाल उसे रोज नये नोट लाकर देते हैं। रोज उसे अपने साथ ले जाते हैं। रात को वह पिये हुए आता है ऐसी बातें बकता है कि सत्ती अपना दरवाजा अन्दर से बन्द कर लेती है और रात भर डर के मारे उसे नींद नहीं आती। इतना कहकर वह रो पड़ी और बोली सिवा माणिक के उसका अपना कोई नहीं है और माणिक भी उसे कोई रास्ता नहीं बताते।

माणिक उस दिन बहुत ही व्यथित हुए और उस दिन उन्होंने एक बहुत ही करुण कविता लिखी और उसे लेकर किसी स्थानीय पत्र में देने ही जा रहे थे कि रास्ते में सत्ती मिली। वह बहुत घबराई हुई थी और रोते-रोते उसकी आंखें सूज आई थीं। उसने माणिक को रोककर कहा—"तुम मेरे यहां मत आना। चमन ठाकुर तुम्हारा क़तल करने पर उतारू है।' चौबीसों घण्टे नशे में धुत रहता है। तुम्हें मेरी मांग की क़सम है। तुम फ़िकर न करना मेरे पास चाकू रहता है और फिर कोई मौका पड़ा तो तुम तो हो ही। जानते हो वह बूढ़ा पोपला महेसरा मुझसे ब्याह करने को कह रहा है।"

माणिक का मन बहुत आकुल रहा। कई बार उन्होंने चाहा कि सत्ती की ओर जांय पर सच बात है कि नशेबाज चमन का क्या ठिकाना, एक ही हाथ है पर सिपाही का हाथ ठहरा।

इस बीच में एक बात और हुई। यह सारा किस्सा, माणिक मुल्ला के नाम के साथ बहुत नमक मिर्च के साथ फैल गया और मुहल्ले की कई बुढ़ियों ने आकर बीजा छीलते हुए माणिक की भाभी को सारी कहानी बताई और ताक़ीद की कि उसका ब्याह कर देना चाहिये, कई ने तो अपने नातेदारों की सुन्दर सुशील लड़कियां तक बताईं। भाभी ने

थोड़ा अपनी तरफ से भी जोड़कर भइया से पूरा किस्सा बताया और भइया ने दूसरे दिन माणिक को बुलाकर समझाया कि उन्हें माणिक पर पूरा विश्वास है, लेकिन माणिक अब बच्चे नहीं हैं, उन्हें दुनिया को देखकर चलना चाहिये। इन छोटे लोगों को मुँह लगाने से कोई फायदा नहीं। ये सब बहुत गन्दे और कमीने क़िस्म के होते हैं। माणिक के ख़ानदान का इतना नाम है। माणिक अपने भइया के स्नेह पर बहुत रोये और उन्होंने वायदा किया कि अब वे इन लोगों से नहीं घुले मिलेंगे।

दो तीन बार सत्ती आई पर माणिक मुल्ला अपने घर से बाहर नहीं निकले और कहला दिया कि नहीं हैं। माणिक अक्सर जमुना के यहाँ जाया करते थे और एक दिन जमुना के दरवाजे पर सत्ती मिली। माणिक कुछ नहीं बोले तो सत्ती रोकर बोली—"नसीब रूठ गया तो तुमने भी साथ छोड़ दिया। क्या ग़ल्ती हो गई मुझसे?" माणिक ने घबरा कर चारों ओर देखा। भइया के दफ्तर से लौटने का वक्त हो गया था। सत्ती उनकी घबराहट समझ गई, क्षण भर उनको ओर बड़ी अजब निगाह से देखती रही और फिर बोली "घबराओ न माणिक। हम जा रहे हैं।" और आंसू पोंछ कर धीरे धीरे चली गई।

उन्हीं बीचों भाभी से और माणिक से अकसर झगड़ा हुआ करता था क्यों कि भाभी भइया साफ़ कह चुके थे कि माणिक को अब कहीं नाकरी करना चाहिये। पढ़ने की कोई ज़रूरत नहीं। पर माणिक पढ़ना चाहते थे। भाभी ने एक दिन जब बहुत जली कटी सुनाई तो माणिक उदास होकर एक बाग में जाकर बरगद के नीचे बेंच पर जाकर बैठ गये और सोचने लगे कि क्या करना चाहिये।

थोड़ी देर बाद उन्हें किसी ने पुकारा तो देखा सामने सत्ती।

बिल्कुल शान्त, मुर्दे की तरह सफ़ेद चेहरा, भावहीन जड़ आंखें, आईं और आकर पांवों के पास ज़मीन पर बैठ गईं और बोली—"आखिर जो सब चाहते थे वह हो गया।"

माणिक के पूछने पर उसने बताया कि कल रात को चमन ठाकुर के साथ महेसर दलाल आया। दोनों बड़ी रात तक बैठ कर शराब पीते रहे। सहसा महेसर से बहुत से रुपयों की थैली लेकर चमन उठ कर बाहर चला गया और महेसर आकर सत्ती से ऐसी बातें करने लगा जिसे सुन कर सत्ती का तन बदन सुलगने लगा और सत्ती बाहर के दरवाजे की ओर बढ़ी तो देखा चमन उसे बाहर से बन्द करके चला गया है। सत्ती ने फौरन अपना चाकू निकाला और महेसर दलाल को एक धक्का दिया तो महेसर दलाल लुढक गये। एक तो बूढ़े दूसरे शराब में चूर और सत्ती जो चाकू लेकर उनके गर्दन पर चढ़ बैठी तो उनका सारा नशा क़ाफूर हो गया और बोले "मार डाल मुझे, मैं उफ़ न करूंगा। मैं तुझ पर हाथ न उठाऊँगा। लेकिन मैंने नगद ५००) दिया है। मैं बाल-बच्चेदार आदमी मर जाऊंगा। और उसके बाद हिचकियाँ भर भर कर रोने लगा और फिर उसने वह कागज़ दिखाया जिस पर चमन ठाकुर ने ५००) पर उसके साथ सत्ती को भेजने की शर्त की थी और महेसर रोने लगा और सत्ती के जैसे किसी ने प्रान खींच लिये हों। महेसर के हाथ पांव फूल गये। फिर महेसर दलाल ने समझाया कि अब तो क़ानूनी कारवाई हो गई है! फिर महेसर दलाल सुख से रक्खेगा वगैरह-वगैरह—पर सत्ती जड़ मुर्दे सी पड़ी रही उसे याद नहीं महेसर ने क्या कहा, उसे याद नहीं क्या हुआ।

सत्ती चुपचाप नीचे निगाह किये नखों से धरती खोदती रही और फिर मेरी ओर देख कर बोली—'महेसर ने आज यह अंगूठी दी है।' माणिक ने हाथ में लेकर देखा तो मुस्काने का प्रयास करती हुई बोली—

'असली है।' माणिक चुप हो रहे। सत्ती ने थोड़ी देर बाद पूछा कि माणिक उदास क्यों हैं तो माणिक ने बताया कि भाभी से पढ़ाई के बारे में चख-चख हो गई है तो सत्ती ने अंगूठी निकाल कर फौरन माणिक के हाथ में रख दी और कहा कि इससे वह फ़ीस जमा कर दे। आगे की बात सत्ती के हाथ में छोड़ दे। माणिक ने इसे नहीं स्वीकार किया तो क्षणभर सत्ती चुप रही फिर सहसा बोली—'मैं समझ गई। अब तुम मुझसे कुछ नहीं लोगे। पर बताओ मैं क्या करूँ? मुझे कोई भी तो नहीं बताता। मैं तुम्हारे पांव पड़ती हूँ। मुझे कोई रास्ता बताओ! कोई रास्ता—तुम जो कहोगे—मैं हर तरह से तैयार हूँ।" और सचमुच सत्ती जो अबतक पत्थर की तरह निष्प्राण बैठी थी पांव पकड़ कर फूट फूट कर रो पड़ी। माणिक घबड़ा कर उठे पर उसने पावों पर सर रख दिया और इतना रोई इतना रोई कि कुछ पूछो मत। पर माणिक ने कहा कि अब उन्हें देर हो रही है। तो वह चुपचाप उठी और चली गई।

एक बार फिर वह मिली और माणिक उस दिन भी उदास थे क्यों कि जुलाई आगई थी और उनके दाख़िले का कुछ निश्चय ही नहीं हो पाता था। सत्ती ने बहुत इसरार करके माणिक को रुपये दिये ताकि उनका काम न रुके और फिर बहुत बिलख-बिलख कर रोई और कहा कि उसकी ज़िन्दगी नरक हो गई है। उसे कोई राह नहीं बताता। माणिक मुल्ला ने सान्त्वना का एक शब्द भी नहीं कहा तो वह चुप होगई और पूछने लगी कि माणिक को उसकी बातें बुरी तो नहीं लगती क्योंकि माणिक के अलावा और कोई नहीं है जिससे वह अपना दुख कह सके। और माणिक से न जाने क्यों वह कोई बात नहीं छिपा पाती है और उस से कह देने पर उसका मन हल्का हो जाता है और उसे लगता है कि कम से कम एक आदमी ऐसा है जिसके आगे उसकी आत्मा निष्पाप और अकलुष है।

माणिक के सामने कोई रास्ता नहीं था और सच तो यह है कि भइया का कहना भी उन्हें ठीक लगता था कि माणिक का और इन लोगों का क्या मुकाबिला, दोनों की सोसायटी अलग, मर्यादा अलग, पर माणिक मुल्ला सत्ती से कुछ कह भी नहीं पाते थे क्योंकि उन्हें पढ़ाई भी जारी रखनी थी, और इसी अन्तर्द्वन्द्व के कारण उनके गीतों में गहन निराशा और कटुता आती जा रही थी।

और फिर एक रात एक अजब सी घटना हुई। माणिक मुल्ला सो रहे थे कि सहसा किसी ने उन्हें जगाया और उन्होंने आँख खोली तो सामने देखा सत्ती ! उसके हाथ में चाकू था, उसकी लम्बी पतली गुलाबी अँगुलियों में चाकू कांप रहा था, चेहरा आवेश से आरक्त, निराशा से नीला, डर से विवर्ण। उसकी बगल में एक छोटा सा बैग था जिसमें गहने और रुपये भरे थे। सत्ती माणिक के पांव पर गिर पड़ी और बोली—"किसी तरह चमन ठाकुर से छूट कर आई हूँ। अब डूब मरूँगी पर वहाँ नहीं लौटूँगी। तुम कहीं ले चलो ! कहीं ! मैं काम करूँगी। नौकरी करूँगी। मज़दूरी कर लूँगी। तुम्हारे भरोसे चली आई हूँ।"

माणिक का यह हाल कि ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की सांस नीचे। कविता उविता तो ठीक है पर यह इल्लत माणिक कहां पालते। और फिर भइया ठहरे भइया और भाभी उनसे सात क़दम आगे। माणिक की सारी किस्मत बड़े पतले तागे पर झूल रही थी। पर आखिर दिमाग़ माणिकमुल्ला का ठहरा। खेल ही तो गया। फौरन बोले—"अच्छा बैठो सत्ती ! मैं अभी चलूँगा। तुम्हारे साथ चलूँगा।" और इधर पहुंचे भइया के पास। चुपचाप दो वाक्यों में सारी स्थिति बता दी। भइया बोले—"उसे बिठाओ, मैं चमन को बुला लाऊँ।" माणिक गये और सत्ती जितना इसरार करे जल्दी निकल

चलने को कि कहीं महेसर दलाल या चमन न आहो पहुँचे उतना माणिक किसी न किसी बहाने टालते जांय और जब सत्ती ने चाकू चमका कर कहा कि 'अगर नहीं चलोगे तो आज या तो मेरी जान जायगी या और किसी की तो' माणिक का रोम-रोम थर्रा उठा और मन ही मन माणिक भइया को स्मरण करने लगे।

सत्ती उनसे पूछती रही, 'कहां चलोगे ? कहाँ ठहरोगे ? कहाँ नौकरी दिलाओगे ? मै अकेली नहीं रहूँगी !' इतने में एक हाथ में लाठी लिए महेसर और एक में लालटेन लिये चमन ठाकुर आ पहुँचे और पीछे-पीछे भइया और भाभी। सत्ती देखते ही नागिन की तरह उछल कर कोने में चिपक गई और क्षण भर में ही स्थिति समझ कर चाकू खोल कर माणिक की ओर लपकी—'दग़ाबाज़ ! कमीना !" पर भइया ने फौरन माणिक को खींच लिया, महेसर ने सत्ती को दबोचा और भाभी चीख़ कर भागीं।

उसके बाद कमरे में भयानक दृश्य रहा। सत्ती क़ाबू में ही न आती थी, पर जब चमन ठाकुर ने अपने एक ही फौज़ी हाथ से पटरा उठा कर सत्ती को दे मारा तो वह बेहोश होकर गिर पड़ी। इसी अव्यवस्था में सत्ती का चाकू वहीं छूट गया और उसके गहनों का बैग भी पता नहीं कहाँ गया, माणिक का अनुमान था कि भाभी ने उसे सुरक्षा के ख़्याल से ले जाकर अपने सन्दूक में रख लिया था।

बेहोश सत्ती को भइया और महेसर उठा कर उसके घर पहुँचा आये और माणिक मुल्ला डर के मारे भइया के कमरे में सोये।

दूसरे दिन चमन ठाकुर के घर पर काफ़ी जमाव था क्योंकि घर खुला पड़ा था, सामान बिखरा पड़ा था और चमन ठाकुर तथा सत्ती दोनों ग़ायब थे और बहुत सुबह उठ कर जो बुढ़ियां गंगा नहाने

जाती हैं उनका कहना था कि एक तांगा इधर से गया था जिस पर कुछ सामान लदा था, चमन ठाकुर बैठा था और आगे की सीट पर सफ़ेद चादर से ढका कोई सो रहा था जैसे लाश हो।

लोगों का कहना है था कि चमन और महेसर ने मिलकर रात को सत्ती का गला घोंट दिया।

छठवीं
दोपहर

क्रमागत

पिछली दोपहर से आगे

सत्ती की मृत्यु ने माणिकमुल्ला के कच्चे भावुक कवि हृदय पर बहुत गहरी छाप छोड़ी थी और नतीजा यह हुआ था कि उनकी कृतियों में मृत्यु की प्रतिध्वनि बार-बार सुनाई पड़ती थी।

इसी बीच में उनके भइया का तबादला हो गया और भाभी उनके साथ चली गईं और घर माणिक की देखभाल में छोड़ दिया गया। माणिक को अकेले घर में बहुत डर लगता था और अक्सर लगता था कि जैसे वे कंकाल के सुनसान घर में छोड़ दिये गये हों। उन्हें पढ़ने का शौक था पर अब पढ़ने में उनका चित्त भी नहीं लगता था, उनकी जेब भी भइया के जाने से बिल्कुल खाली हो गई थी और वे कोई ऐसी नौकरी ढूँढ़ रहे थे जिसमें वे नौकरी के साथ साथ पढ़ाई भी क़ायम रख सकें, इन सभी परिस्थितियों ने मिल कर उनके हृदय पर गहरी छाप छोड़ी थी और पता नहीं किस रहस्यमय आध्यात्मिक कारण से वे अपने को सत्ती की मृत्यु का जिम्मेवार समझने लगे थे। उनके मन की धीरे-धीरे यह हालत हो गई कि उन्हें मुहल्ला छोड़ कर ऐसी जगहें अच्छी लगने लगीं जैसे—दूर कहीं पर सुनसान पीपल तले की छाँह, भयानक उजाड़ क़ब्रगाह, पुराने मरघट, टीले और खड्ड

और उनका कर्त्तव्य तो मृत्यु-पथ पर अदम्य साहस से अग्रसर होते रहना है। ऐसा विचार आते ही वे फिर कछुए की तरह अपने को समेट कर अन्तर्मुख हो जाते। धीरे धीरे उनकी स्थिति उस स्थितप्रज्ञ की भांति हो गई जिसे दुःख सुख, मित्र शत्रु, प्रकाश तिमिर, झूठ और सच में कोई भेद नहीं मालूम पड़ता, जो समय और दिशा के बन्धन से छुटकारा पा कर पृथ्वी पर बद्ध जीवों के बीच में जीवन्मुक्त आत्माओं की भांति विचरण करते हैं। सामाजिक जीवन उन्हें बार बार अपने शिकंजे में कसने का प्रयास करता था पर वे प्रेम के अलावा सभी चीजों को निस्सार समझते थे चाहे वह आर्थिक प्रश्न हो, या राजनीतिक आन्दोलन; मोतिहारी का अकाल हो या कोरिया की लड़ाई; शान्ति की अपील हो या सांस्कृतिक स्वाधीनता का घोषणापत्र। केवल प्रेम सत्य है, प्रेम जो रस है, रस जो ब्रह्म है—(रसो वै सः—देखिये बृहदारण्यक—)।

और इस स्वयम्-स्वीकृत मरण स्थिति से यह हुआ कि उनके गीतों में बेहद करुणा, दर्द और निराशा आगई और चूँकि इस पीढ़ी के हर व्यक्ति के हृदय में कहीं न कहीं माणिक मुल्ला और देवदास दोनों का अंश है अतः लोग झूम झूम उठते थे यद्यपि वे सबके सब ज्यादा चतुर थे, मृत्यु-गीतों की प्रशंसा करने के बाद अपने अपने काम में लग जाते थे पर माणिक मुल्ला जरूर ऐसा अनुभव करते थे जैसे यह उड़ते हुए चकोर के टूटे हुए पंख हैं जो चांद के पास पहुँचते पहुँचते पहुँचते टूट गये और गिर रहे हैं, गिर रहे हैं, और हवा के हर हल्के झोंके के आघात से पथ-विचलित हो जाते हैं, सच तो यह है कि इनकी न कोई दिशा है; न पथ, न लक्ष्य, न प्रयास और न कोई प्रगति क्यों कि पतन को, नीचे गिरने को प्रगति तो नहीं कहते!

इसी समय माणिक मुल्ला से मैंने पूछा कि आखिर इस परिस्थिति से कभी आपका मन नहीं ऊबता था? वे बोले (शब्द मेरे हैं, तात्पर्य

क्रमागत : पिछली दोपहर से आगे

उनका) कि—"ऊबता क्यों नहीं था ? अक्सर मैं ऊब जाता था तो कुछ ऐसे ऐसे करतब करता था कि मैं भी चौंक उठता था और दूसरे भी चौंक उठते थे। जिनसे मैं अक्सर अपने को ही मैं विश्वास दिलाया करता था कि मैं जीवित हूँ, क्रियाशील हूँ। जैसे—कह कुछ और रहा हूँ, कहते कहते कर कुछ और गया। इसे संकीर्णमन वाले लोग झूठ बोलना या धोखा देना भी कह सकते हैं। पर यह सब केवल दूसरों को चौंकाना मात्र था, अपनी घबराहट से ऊब कर। तीखी बातें करना, हर मान्यता को उखाड़ फेंकने की कोशिश करना,यह सब मेरे मन की उस प्रवृत्ति से प्रेरित थीं जो मेरे अन्दर की जड़ता और खोखलेपन का परिणाम थी।"

लेकिन जब हम लोगों ने पूछा कि इसमें आख़िर उन्हें सन्तोष क्या मिलता था तो वे बोले "मैं महसूस करता था कि मैं अन्य लोगों से कुछ अलग हूँ, मेरा व्यक्तित्व अनोखा है, अद्वितीय है और समाज मुझे समझ नहीं सकता। साधारण लोग अत्यन्त साधारण हैं, मेरी प्रतिभा के स्तर से बहुत नीचे हैं, मैं उन्हें जिस तरह चाहूँ बहका सकता हूँ। मुझमें अपने व्यक्तित्व के प्रति एक अनावश्यक मोह, उसकी विकृतियों को भी प्रतिभा का तेज समझने का भ्रम और अपनी असामाजिकता को भी अपनी ईमानदारी समझने का अनावश्यक दम्भ आ गया था। धीरे धीरे मैं अपने ही को इतना प्यार करने लगा कि मेरे मन के चारों ओर ऊँची ऊँची दीवारें खड़ी हो गईं और मैं स्वयम् अपने अहंकार में बन्दी हो गया, पर इसका नशा मुझ पर इतना तीखा था कि मैं कभी अपनी असली स्थिति पहचान नहीं पाया।"

"तो आप इस मनस्थिति से कैसे मुक्त हुए ?"

"वास्तव में एक दिन बड़ी विचित्र परिस्थिति में यह रहस्य मुझ पर खुला कि सत्ती जीवित है और अब उसके मन में मेरे लिये प्रेम के स्थान पर गहरी घृणा है। इसका पता लगते ही मैंने सत्ती की मृत्यु को लेकर

जो व्यर्थ का ताना बाना अपने व्यक्तित्व के चारों ओर बुन रक्खा था वह छिन्न भिन्न हो गया और मैं फिर एक स्वस्थ साधारण व्यक्ति की तरह हो गया।"

उसके बाद उन्होंने वह घटना बताई।

जिन चायघरों में वे जाते थे उसके चारों ओर अक्सर भिखारी घूमा करते थे। वे चाय पीकर बाहर निकलते कि भिखारी उन्हें घेर लिया करते।

एक दिन उन्होंने एक नये भिखारी को देखा। एक छोटी सी लकड़ी की गाड़ी में वह बैठा था। उसका एक हाथ कटा था और एक औरत गोद में एक भिनकता हुआ बच्चा लिये गाड़ी खींचते चली आ रही थी। वह आकर माणिक के पास खड़ी हो गई और पीले-पीले दाँत निकाल कर कुछ कहा कि माणिक ने आश्चर्य से देखा कि वह भिखारी तो है चमन ठाकुर और यह सत्ती है। माणिक को नज़दीक से देखते ही सत्ती चौंक कर दो कदम पीछे हट गई, फौरन उसका हाथ कमर पर गया शायद चाकू की तलाश में, पर चाकू न पाकर उसने फिर प्याला उठाया और खून की प्यासी दृष्टि से माणिक की ओर देखती हुई आगे बढ़ गई।

यह देख कर कि सत्ती जीवित है और बाल बच्चों सहित प्रसन्न है माणिक के मन की सारी निराशा जाती रही और उन्हें नया जीवन मिल गया और कुछ दिनों बाद ही आर० एम० एस० में तन्ना की जगह खाली हुई तो कविता कहानी छोड़ कर उन्होंने नौकरी भी कर ली और सुख से रहने लगे। (जैसे माणिक मुल्ला के अच्छे दिन लौटे वैसे राम करें सब के लौटें।) इसी के कुछ दिनों के बाद हम लोगों से माणिक मुल्ला से घनिष्ठ मित्रता हो गई और उनके यहाँ हम लोगों का अड्डा जमने लगा था।

अनध्याय

यद्यपि मेरा हाज़मा भी दुरुस्त है और मैंने डान्टे की डिवाइना कामेडिया भी नहीं पढ़ी है फिर भी मैं एक सपना देख रहा हूँ।

चिमनी से निकलने वाले धुएँ की तरह एक सतरंगा इन्द्रधनुष धीरे-धीरे उग रहा है। आकाश के बीचोबीच आकर वह इन्द्रधनुष टंग गया है।

एक जलता हुआ होठ, काँपता हुआ—बाईं ओर से इन्द्रधनुष की ओर खिसक रहा है।

एक जलता हुआ होठ, काँपता हुआ—दाईं ओर से इन्द्रधनुष की ओर खिसक रहा है।

दाईं ओर माणिक का होठ, बाईं ओर लीला का! खिसकते-खिसकते इन्द्रधनुष के नज़दीक आकर दोनों रुक जाते हैं।

नीचे धरती पर महेसर दलाल एक गाड़ी खींचते हुए आते हैं। गाड़ी चमन ठाकुर की भीख माँगने वाली गाड़ी है। उसमें छोटे-छोटे बच्चे बैठे हैं। जमुना का बच्चा, तन्ना का बच्चा, सत्ती का बच्चा।

क्रमागत : पिछली दोपहर से आगे

चमन ठाकुर का एक कटा हुआ हाथ अन्धे अजगर की तरह आता है। बच्चों की गर्दन में लिपट जाता है, मरोड़ने लगता है। उनका गला घुटता है।

इन्द्रधनुष के दोनों ओर प्यासे होठ और नज़दीक आ जाते हैं।

तन्ना के दोनों कटे हुए पैर राक्षसों की तरह झूमते हुए आते हैं। उनमें नई लोहे की नालें जड़ी हैं। बच्चे उनसे कुचल जाते हैं। हरी घास—दूर-दूर तक बरसात में साइकिलों से कुचली हुई वीर बहूटियाँ फैली हैं। रक्त सूख कर गाढ़ा, काला हो गया है। इन्द्रधनुष की छाया तमाम पहाड़ों और मैदानों पर तिरछी होकर पड़ती है।

माताएँ सिसकती हैं! जमुना, लिली, सत्ती।

दोनों होठ इन्द्रधनुष के और समीप खिसकने लगते हैं···और समीप ····और समीप।

एक काला चाकू इन्द्रधनुष को रस्से की तरह काट देता है। दोनों होठ गोश्त के मुर्दा लोथड़ों की तरह गिर पड़ते हैं।

चीलें·····चीलें···चीलें··· ··टिड्डियों की तरह अनगिनती चीलें!

सातवीं दोपहर

सूरज का सातवां घोड़ा

अर्थात् वह जो सपने भेजता है !

अगले दिन मैं गया और माणिक मुल्ला से बताया कि मैंने यह सपना देखा तो वे झल्ला गये। "देखा है तो मैं क्या करूँ ? जब देखो तब 'सपना देखा है, सपना देखा है !' अरे कौन शेर, चीता देखा है कि गाते फिरते हो !" जब मैं चुप हो गया तो माणिक मुल्ला उठ कर मेरे पास आये और सान्त्वना भरे शब्दों में बोले—"ऐसे सपने तुम अक्सर देखते हो ?" मैंने कहा 'हाँ' तो बोले—"इसके मतलब यह हैं कि प्रकृति ने तुम्हें विशेष कार्य के लिये चुना है ? यथार्थ जिन्दगी के बहुत से पहलुओं को, बहुत सी चीजों के आन्तरिक सम्बन्ध को और उनके महत्व को तुम सपनों में एक ऐसे विन्दु से खड़े होकर देखोगे जहाँ से दूसरे नहीं देख पायेंगे और फिर अपने सपनों को सरल भाषा में तुम सबके सामने रक्खोगे। समझे !" मैंने सर हिलाया कि हाँ मैं समझ गया तो वे फिर बोले—"और जानते हो ये सपने सूरज के सातवें घोड़े के भेजे हुए हैं।"

जब मैंने पूछा कि यह क्या बला है तो और लोग अधीर हो उठे और बोले, यह सब मैं बाद में पूछ लूँ और माणिक मुल्ला से कहानी सुनाने का इसरार करने लगे।

माणिक मुल्ला ने आगे कहानी सुनाने से इन्कार किया और बोले एक अविच्छिन्न क्रम में इतनी प्रेम कहानियाँ बहुत काफी हैं, सच तो यह है कि उन्होंने इतने लोगों के जीवन को लेकर एक पूरा उपन्यास ही सुना डाला है सिर्फ़ उसका रूप कहानियों का रक्खा ताकि हर दोपहर को हम लोगों की दिलचस्पी बदस्तूर बनी रहे और हम लोग ऊबें न! वरना सच पूछो तो यह एक उपन्यास ही था और इस ढङ्ग से सुनाया गया था कि जो लोग सुखान्त उपन्यास के प्रेमी हैं वे जमुना के जीवन के सुखद वैधव्य से प्रसन्न हों, स्वर्ग में तन्ना और जमुना के मिलन पर प्रसन्न हों, लिली के विवाह से प्रसन्न हों और सत्ती के चाकू से माणिक मुल्ला की जान बच जाने पर प्रसन्न हों, और जो लोग दुखान्त के प्रेमी हैं वे सत्ती के भिखारी जीवन पर दुखी हों, तन्ना की रेल दुर्घटना पर दुखी हों, लिली और माणिक मुल्ला के अनन्त विरह पर दुखी हों। साथ ही माणिक मुल्ला ने हम लोगों को यह भी समझाया कि यद्यपि इन्हें प्रेम कहानियाँ कहा गया है पर वास्तव में ये 'नेति प्रेम' कहानियाँ हैं। अर्थात् जैसे उपनिषदों में यह ब्रह्म नहीं है, नेति-नेति कह कर ब्रह्म के स्वरूप का निरूपण किया गया है उसी तरह इन कहानियों में 'यह प्रेम नहीं था, यह भी प्रेम नहीं था, यह भी प्रेम नहीं था,' कह कर प्रेम की व्याख्या और सामाजिक जीवन में उसके स्थान का निरूपण किया गया था। 'सामाजिक जीवन' का उच्चारण करते हुए माणिक मुल्ला ने फिर कन्धे हिला कर मुझे सचेत किया और बोले तुम बहुत सपनों के आदी हो और तुम्हें यह बात गिरह में बाँध लेनी चाहिये कि जो प्रेम समाज

की प्रगति और व्यक्ति के विकास का सहायक नहीं बन सकता वह निरर्थक है। यही सत्य है! इसके अलावा प्रेम के बारे में कहानियों में जो कुछ कहा गया है, कविताओं में जो लिखा गया है, पत्रिकाओं में जो छापा गया है, वह सब रंगीन झूठ है और कुछ नहीं। फिर उन्होंने यह भी बताया उन्होंने सब से पहले प्रेम कहानियाँ इसीलिये सुनाई कि यह रूमानी विभ्रम हम लोगों के दिमाग़ पर इस बुरी तरह छाया हुआ है कि इसके सिवा हम लोग कुछ भी सुनने के लिये तैयार न होते। (बाद में उन्होने अन्य बहुत से कथा रूप में उपन्यास सुनाये जिन्हें यदि अवकाश मिला तो लिखूंगा, पहले इस बीच में माणिक मुल्ला की प्रतिक्रिया इन कहानियों पर जान लूं।)

कथा-क्रम के बारे में स्पष्टीकरण देते हुए उन्होंने कहा कि सात दोपहर तक चलने वाला यह क्रम बहुत कुछ धार्मिक' पाठ-चक्रों के समान है जिनमें एक किसी सन्त के वचन या धर्म-ग्रन्थ का एक सप्ताह तक प्रणयन होता है और रोज़ प्रसाद बटता है, उसी प्रकार रोज़ उन्होंने हम लोगों को एक कहानी सुनाई और अन्त में निष्कर्ष बाँटा! (यद्यपि इसमें आंशिक सत्य था क्योंकि कई कहानियों में उन्होंने निष्कर्ष बतलाया ही नहीं!) माणिक कथा-चक्र में दिनों की संख्या सात रखने का कारण भी शायद बहुत कुछ सूरज के सात घोड़ों पर आधारित था।

अन्त में मैंने फिर पूछा कि सूरज के सात घोड़ों से उनका क्या तात्पर्य था और सपने सूरज के सातवें घोड़े से कैसे सम्बन्ध हैं तो वे बड़ी गम्भीरता से बोले कि—'देखो ये कहानियाँ वास्तव में प्रेम नहीं वरन उस जिन्दगी का चित्रण करती हैं जिसे आज का निम्न-मध्यवर्ग जी रहा है। उसमें प्रेम से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया है आज का आर्थिक संघर्ष, नैतिक विशृंखलता, और इसीलिए इतना अनाचार, निराशा, कटुता और अन्धेरा मध्यवर्ग पर छा गया

है। पर कोई न कोई ऐसी चीज़ है जिसने हमें हमेशा अन्धेरा चीर कर आगे बढ़ने, समाज-व्यवस्था को बदलने और मानवता के सहज मूल्यों को पुनः स्थापित करने की ताकत और प्रेरणा दी है। चाहे उसे आत्मा कह लो चाहे कुछ और। और विश्वास, साहस, सत्य के प्रति निष्ठा, उस प्रकाशवाही आत्मा को उसी तरह आगे ले चलते हैं जैसे सात घोड़े सूर्य को आगे बढ़ा ले चलते हैं। कहा भी गया है 'सूर्य आत्मा जगतस्थुषश्च।'

तो वास्तव में सूर्य के रथ को आगे बढ़ना ही है। हुआ यह है कि हमारे वर्ग-विगलित, अनैतिक, भ्रष्ट और अन्धेरे जीवन की गलियों में चलने से सूर्य का रथ काफी टूट-फूट गया है और बेचारे घोड़ों की तो यह हालत है कि किसी की दुम कट गई है तो किसी का पैर उखड़ गया है, तो कोई सूख कर ठठरी हो गया है, तो किसी के खुर घायल हो गये हैं। अब बचा है सिर्फ एक घोड़ा जिसके पंख अब भी साबित हैं, जो सीना ताने, गर्दन उठाये आगे चल रहा है। वह घोड़ा है, भविष्य का घोड़ा, तन्ना, जमुना और सत्ती के नन्हें निष्पाप बच्चों का घोड़ा, जिनकी ज़िन्दगी हमारी ज़िन्दगी से ज्यादा अमन चैन की होगी, ज्यादा पवित्रता की होगी, उसमें ज्यादा प्रकाश होगा, ज्यादा अमृत होगा। वही सातवां घोड़ा हमारी पलकों में भविष्य के सपने और वर्तमान के नवीन आकलन भेजता है ताकि हम वह रास्ता बना सकें जिन पर होकर भविष्य का घोड़ा आयेगा; इतिहास के वे नये पन्ने लिख सकें जिन पर भविष्य के अश्वमेध का दिग्विजयी घोड़ा दौड़ेगा। माणिक मुल्ला ने यह भी बताया कि यद्यपि बाकी छः घोड़े दुर्बल, रक्तहीन और विकलांग है पर सातवां घोड़ा तेजस्वी और शौर्यवान है और हमें अपना ध्यान और अपनी आस्था उसी पर रखनी चाहिये।

माणिक मुल्ला ने इसी बात को ध्यान में रखते हुए माणिक-कथा-चक्र की इस प्रथम शृंखला का नाम 'सूरज का सातवां घोड़ा' रक्खा था। सम्भव है यह नाम आपको पसन्द न आवे इसीलिये मैंने यह कबूल कर लिया कि यह मेरा दिया हुआ नहीं है।

अन्त में मैं यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि इस लघु उपन्यास की विषय वस्तु में जो कुछ भी भलाई-बुराई हो उसका जिम्मा मुझ पर नहीं माणिक मुल्ला पर ही है। मैंने सिर्फ अपने ढंग से वह कथा आपके सामने प्रस्तुत कर दी है। अब आप माणिक मुल्ला और उनकी कथाकृति के बारे में अपनी राय बनाने के लिये स्वतन्त्र हैं।